विज्ञान परिचर्या

त्रैमासिक पत्रिका | वर्ष 3, अंक 1 | जुलाई–सितम्बर 2012

मानवता की सेवा में रत
रोगमुक्त करने को अविरत
सुश्रुत से लेकर जो अब तक
उनके सम्मुख सदैव हम नत

अधिशासी सम्पादक

देवी प्रसाद उनियाल,
वरिष्ठ वैज्ञानिक अधिकारी, उत्तराखंड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद्, (यूकॉस्ट)

प्रबन्ध सम्पादक

कमला पन्त,
अध्यक्ष, पीपुल्स एसोसिएशन ऑफ हिल एरिया लांचर्स (पहल)

प्रधान सम्पादक

मुकुन्द नीलकण्ठ जोशी
एसोशिएट प्रोफेसर (से.नि.),
डी.बी.एस. कालेज, देहरादून

सम्पादन सहयोग

शशिकान्त गुप्त
एसोशिएट प्रोफेसर (से.नि.),
डी.बी.एस. कालेज, देहरादून

अजय कुमार बियानी
एसोशिएट प्रोफेसर,
डी.बी.एस. कालेज, देहरादून

नीलाम्बर पुनेठा
जिला समन्वयक, यू–कास्ट, पिथौरागढ़

अशोक कुमार पंत
राज्य समन्वयक,
राष्ट्रीय बाल विज्ञान कांग्रेस, उत्तराखण्ड

दिनेश चन्द्र शर्मा
ग्रा० व पोस्ट मस्वासी,
तहसील स्वार, रामपुर, (उ.प्र.)

सलाहकार मण्डल

प्रो. ए.एन. पुरोहित,
पूर्व कुलपति,
हेनब. गढ़वाल विश्वविद्यालय, आलमी आँचल,
डोभालवाला, देहरादून

डॉ. राजेन्द्र डोभाल,
महानिदेशक,
उत्तराखण्ड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद,
देहरादून

डॉ. एस.एस. नेगी,
निदेशक,
वन अनुसंधान संस्थान,
देहरादून

प्रो. एस.सी. सक्सेना,
निदेशक,
भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान,
रूड़की

डॉ. ए.के. गुप्ता,
निदेशक, वाड़िया हिमालय भूविज्ञान संस्थान,
देहरादून

डॉ. मनोज पटेरिया,
निदेशक,
राष्ट्रीय विज्ञान एवं प्रोद्योगिकी संचार परिषद्,
नई दिल्ली

डॉ लीलाधर जगूड़ी,
सीताकुटीर, बदरीपुर,
देहरादून

डॉ. एम.ओ. गर्ग,
निदेशक,
भारतीय पेट्रोलियम संस्थान,
देहरादून

प्रो. धीरेन्द्र शर्मा,
निदेशक,
सेंटर फॉर साइंस पॉलिसी रिसर्च, निर्मल निलय,
भगवंतपुर, देहरादून

डॉ. रवि चोपड़ा,
पीपुल्स साइंस इंस्टीट्यूट,
252, वसंत विहार, फेज–1,
देहरादून

डॉ. बी.एस. बिष्ट,
कुलपति,
जी.बी.पन्त कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय,
पन्तनगर

डॉ. जी.एस. रौतेला,
महानिदेशक,
राष्ट्रीय विज्ञान संग्रहालय परिषद्,
कोलिकाता

डॉ. डी.के. पाण्डे,
राष्ट्रीय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संचार परिषद,
नई दिल्ली

डॉ अनुज सिन्हा,
सलाहकार, विज्ञान प्रसार
विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग,
भारत सरकार

डॉ एल.एम.एस. पालनी,
निदेशक,
गोविन्द बल्लभ पन्त हिमालय पर्यावरण
विकास संस्थान, कटारमल कोसी,
अल्मोड़ा

प्रो० रामसागर,
निदेशक,
आर्यभट्ट प्रेक्षण विज्ञान संस्थान,
नैनीताल

डा० जगदीश चन्द्र भट्ट,
निदेशक,
विवेकानन्द पर्वतीय कृषि अनुसंधान संस्थान,
अल्मोड़ा

© vigyan pricharcha, 2010

प्रकाशकीय कार्यालय
मृत्युंजय धाम, 18, शास्त्री नगर, हरिद्वार रोड, देहरादून–248001

फोन : 0135-2669236
मोबाइल : 09759348564, 09412047994, 09897020782, 09837862096
ईमेल : pahal_uttarakhand@yahoo.co.in
वेबसाइट : www.pahal_understanding.org

विज्ञान परिचर्चा के लेखों में प्रकाशित सभी विचार लेखकों के अपने हैं तथा लेखकीय स्वतन्त्रता के अन्तर्गत व्यक्त किये गये हैं। उनके साथ सम्पादक अथवा प्रकाशक का सहमत होना या उन विचारों का पत्रिका की नीति से कोई सम्बन्ध होना आवश्यक नहीं है।

विज्ञान परिचर्चा

त्रैमासिक पत्रिका
वर्ष 3, अंक 1
जुलाई–सितम्बर 2012

पीपुल्स एसोसिएशन ऑफ हिल एरिया लांचर्स (पहल), भारतीय विज्ञान लेखक संघ (इस्वा) उत्तराखंड प्रभाग तथा उत्तराखंड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद् (यूकॉस्ट) के संयुक्त तत्त्वावधान में प्रकाशित त्रैमासिक पत्रिका, अंतर्भूत उत्तराखण्ड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद् समाचार पत्रक–
जुलाई–सितम्बर 2012

पहल

यूकास्ट
विज्ञानम् लोकहिताय

यह पत्रिका विज्ञान के प्रचार–प्रसार हेतु, विज्ञान–सुधी पाठकों के आग्रह पर 'प्रकाशकीय कार्यालय' से निःशुल्क प्रदान की जाती है।

अनुक्रम

पाठकों की प्रतिक्रिया 04

सम्पादकीय 05

उत्तराखण्ड के विज्ञान ऋषि 8 – पद्मभूषण बोशी सेन – जगदीश चन्द्र भट्ट 07

उत्तराखण्ड के विज्ञान संस्थान 6 – विवेकानन्द पर्वतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, अल्मोड़ा–एक अवलोकन 11

कितनी मुद्राएं? गणित की उपेक्षा से उपजी एक व्यथा–कथा – आइवर यूशिएल 21

भारत में गणित की विकास यात्रा – अवनीश उनियाल 24

विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग समाचार पत्रक 27

आचार्य सुश्रुत–आधुनिक शल्य चिकित्सा के जनक – पुरूषोत्तम उपाध्याय 35

समेकित नाशीजीव प्रबंधन – दिनेश मणि 42

मानव के क्रिया कलाप एवं बाढ़ की समस्या – दुर्गापद कुइति 45

ईश्वरीय कण – महेश कुमार शर्मा 47

परितंत्र की कहानी– 9 –हाथियों को रौंदती रेलगाड़ियाँ – दिनेश चन्द्र शर्मा 50

पहल के समाचार 51

आत्माः एक वैज्ञानिक स्पष्टीकरण – एस. के. गुप्ता 54

विज्ञान कविता – स्पेस शटल युग का अन्त – काली शंकर 56

प्राकृतिक आपदाएँः भ्रांतियाँ एवं तथ्य – एक आकलन – मुकुन्द नीलकण्ठ जोशी 58

विज्ञान वर्ग पहेली–7 60

बुद्धि खाद्य – विजय खण्डूरी 60

पाठकों की प्रतिक्रिया

विज्ञान परिचर्चा का प्रकाशन निश्चित रूप से अत्यन्त सराहनीय एवं प्रशंसनीय है। पत्रिका में प्रकाशित समग्र सामग्री उत्कृष्ट है। पिछले दोनो अंक संग्रहणीय हैं। नयनाभिराम कलेवर से युक्त पत्रिका हिन्दी में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के विभिन्न पक्षों पर सारगर्भित एवं सूचनाप्रद जानकारी प्रस्तुत करती है। पत्रिका के उत्तरोत्तर और अधिक उत्कृष्ट होने की शुभकामना करता हूँ।

डा. दिनेश मणि
एसोशिएट प्रोफसर, रसायन विज्ञान,
इलाहाबाद विश्वविद्यालय
पूर्व संपादक 'विज्ञान' मासिक पत्रिका

आपके संपादन में प्रकाशित त्रैमासिक पत्रिका 'विज्ञान परिचर्चा' की प्रति प्राप्त हुई। निःसन्देह यह पत्रिका विज्ञान की विभिन्न विधाओं से जुड़े प्रतिष्ठित वैज्ञानिकों एवं साहित्यकारों के महत्वपूर्ण विचारों को प्रस्तुत कर समाज के लिये एक ज्ञानपरक साहित्य का सृजन कर रही है। पत्रिका के माध्यम से उत्तराखण्ड की भौगोलिक स्थितियों/परिस्थितियों के साथ साथ इसका आकर्षक स्वरूप परिलक्षित होता है। इस महान् कार्य के लिये आपको बहुत बहुत बधाई।
पत्रिका से हमें निरंतर जोड़े रखें। धन्यवाद।

डा. एस. एस. नेगी
उत्कृष्ट वैज्ञानिक
पूर्व संपादक 'विज्ञान' मासिक पत्रिका

विज्ञान परिचर्चा में प्रकाशित अनेक लेख सरस, सशक्त, समीचीन और सामयिक हैं। पत्रिका में पठनीय सामग्री अत्यन्त रोचक, ज्ञानवर्द्धक और गुणवत्ता से परिपूर्ण है।
उत्कृष्ट कलेवर, अच्छी सजावट, उत्तम कागज पर बढ़िया मुद्रण के लिये आपका प्रयास प्रशंसनीय व सराहनीय है। राजभाषा व राष्ट्रभाषा हिन्दी में लोकप्रिय विज्ञान के प्रति रूचि व जागरूकता उत्पन्न करने और इसके प्रचार व प्रसार के लिये आप साधुवाद व बधाई के पात्र हैं।
विश्वास है कि आपके मार्गदर्शन में यह ख्यातिप्राप्त पत्रिका निरन्तर प्रगति के पथ पर अग्रसर होते हुये सोपान के शिखर पर पहुंचकर अपने लक्ष्य को प्रापत कर मील का पत्थर साबित होगी।

डा. महेश कुमार शर्मा
संयुक्त निदेशक (से.नि.)
आई.आर.डी.ई (डी.आर.डी.ओ.)

संपादकीय

विज्ञान परिचर्चा के इस अंक के साथ हम अपने प्रकाशन के तीसरे वर्ष में प्रवेश कर रहे है। जब हमने पत्रिका का प्रकाशन प्रारम्भ किया तो हमारे प्रमुख उद्देश्य थे हिन्दी में लोकप्रिय विज्ञान लेखन के माध्यम से अधिकृत वैज्ञानिकों की सहायता से समाज को विज्ञान की नवीनतम उपलब्धियों से परिचित कराना, विविध वैज्ञानिक विषयों तथा उनके सामाजिक सम्बन्धों पर गवेषणात्मक चिन्तन प्रस्तुत करना तथा समाज में वैज्ञानिक दृष्टिकोण का प्रचार प्रसार करना। हम कह सकते हैं कि हमने गत आठ अंकों के माध्यम से इन सभी क्षेत्रों में ईमानदारी से प्रयास किया है।

हमें अपने इस कार्य में विभिन्न क्षेत्रों से सम्बन्धित अनेकानेक स्थापित तथा नवीन विज्ञान लेखकों तथा वैज्ञानिकों का भरपूर सहयोग मिला है। अनेक वैज्ञानिक हमारे आग्रह पर हिन्दी विज्ञान लेखक बने यह निश्चित रूप से प्रसन्नता की बात है। अनेक लेखकों को हम प्रत्रिका के माध्यम से एक मंच प्रदान कर पाये यह भी हमारी उपलब्धि है। गत आठ अंकों में हमें प्रकाशन योग्य सामग्री की कभी कमी नहीं पड़ी यह तथ्य हम सन्तोष के साथ अधोरेखित कर सकते हैं।

यह सब ऐसा होते हुए भी हम यह भली भांति अनुभव करते हैं कि मंजिल अभी बहुत दूर है। पं. अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध' ने किसी अन्य सन्दर्भ में कहा था कि

'चार डग हमने भरे तो क्या हुआ
है पड़ा मैदान कोसों का अभी'

उनकी यह उक्ति हमारे लिये भी संपूर्ण रूप से सच है। हम एक छोटा सा लेखक वर्ग तो बना पाये हैं पर कोई पाठक वर्ग भी बना पाये हैं कि नहीं यह अभी निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता। विज्ञान पिरचर्चा चूंकि उत्तराखण्ड शासन के आर्थिक सहयोग से प्रकाशित होती है अतः इसके अंक बिक्री के लिये नहीं होते, वरन् अमूल्य हैं। इसलिये बिक्री के आंकडों से पाठक संख्या नहीं बताई जा सकती। हम परिचर्चा के अंक सारे प्रदेश तथा देश के अनेक व्यक्तियों तथा संस्थानों को वितरित करते हैं। जो मांगता है, उसे देते हैं। परन्तु एक अंक पाने के बाद यदि किसी को अगला अंक न मिले और वह इस सम्बन्ध में पूछताछ करे या जानना चाहे कि अगला अंक कब निकल रहा है, देर क्यों हो रही है या मुझे क्यों नहीं भेजा गया तो हम समझ सकते हैं कि हमने अपना पाठक वर्ग भी तैयार कर लिया है। ऐसी पूछताछ हमसे होती रहती है। किसी ने कहीं पर कोई अंक देखा तो अपने लिये भी पाने की मांग रखी है। ऐसे जिज्ञासु पाठकों की संख्या तेजी से बढ़ रही है। फिर भी हमें लगता है कि ऐसी पूछताछ अभी कम है। हम पाठकों में विज्ञान परिचर्चा का अंक पाने की ललक या न मिलने पर उतनी बेचैनी उत्पन्न करने में अभी सम्भवतः सफल नहीं हुए हैं जितनी हमें अपेक्षित है।

जो दूसरा ऐसा क्षेत्र है जहाँ अभी बहुत काम करने की आवश्यकता है वह है और अधिक वैज्ञानिकों को हिन्दी में विज्ञान लेखन हेतु प्रोत्साहित करना। अहिन्दी भाषी राज्यों की तो बात जाने दें परन्तु हिन्दी भाषी राज्यों में भी अनेक विज्ञान संस्थान हिंदी को पूजनीय वस्तु मानते हैं और जैसे आस्तिक घरों में पूजा के थोड़े से समय ही भगवान् को याद किया जाता है परन्तु बाकी सारा दिन का समय भगवान् को भुला कर सांसारिक व्यवहार में ही लगाया जाता है वैसे ही हम भी केवल हिन्दी दिवस या पखवाड़े में हिंदी की जयजयकार करते हैं और बाकी संपूर्ण वर्ष सारा कार्य व्यवहार अंग्रेजी में ही चलता रहता है। सभी विज्ञान संस्थानों के वैज्ञानिक भी अपने सारे विज्ञान सम्बन्धी कार्य भी हिंदी में ही करने लगें ऐसा तो संभव नहीं दिखता परन्तु उनके कार्यो के विवरण हिंदी में भी नियमित रूप से प्रकाशित हों इस दिशा में प्रयत्न अवश्य किया जाना चाहिये। और ये विवरण किसी हिन्दी अधिकारी द्वारा अंग्रेजी से अनुवादित न हो कर स्वयं वैज्ञानिकों द्वारा मूल रूप से हिन्दी में ही लिखे जाने चाहिये।

जब इस संबंध में हमने कुछ वैज्ञानिकों से चर्चा की तो दो प्रकार की प्रतिक्रियाएँ सामने आईं। कुछ लोगों ने एक मौलिक प्रश्न उठाया कि हिंदी में विज्ञान लेखन होना ही क्यों चाहिये? किसके लिये होना चाहिये? हिंदी जनसामान्य की भाषा है, वैज्ञानिकों की नहीं। हमने अपना सारा विज्ञान अंग्रेजी में पढ़ा है। आज संसार में जो नई नई खोजें हो रही हैं वह सारा

ज्ञान हमें अंग्रेजी में ही मिलता है। हम आपस में अंग्रेजी में ही संवाद कर पाते हैं। हम जो वैज्ञानिक निष्कर्ष प्राप्त करते हैं उनकी जानकारी सरल शब्दों और भाषा में जनता को दी जाय यहाँ तक तो ठीक है पर इससे अधिक उच्च स्तर की बातें न करने की आवश्यकता है, न की जा सकती हैं। आप किसी डॉक्टर से कहें कि वे अपने सारे पर्चे हिंदी में ही लिखें या सारी जांचों के विवरण हिंदी में ही तैयार किये जांय तो ऐसा करना न व्यवहार्य है और न उसकी कुछ उपयोगिता है क्योंकि उनमें क्या लिखा है यह रोगी या उसके घरवालों की वैसे ही समझ में नहीं आयेगा क्योंकि वह हिंदी में हो या अंग्रेजी में लिखा जायेगा तकनीकी भाषा में ही। सामान्य अंग्रेजी जानने वाले भी उन्हें कहाँ समझ पाते हैं। उनमें लिखी बातें केवल विषय के जानकारों के लिये ही होती है। रोगी को तो समान्य हिंदी या अंग्रेजी में केवल निष्कर्ष बताया जाता है। इसलिये हिंदी में विज्ञान लेखन का केवल इतना ही उपयोग है कि सरल सामान्य भाषा में लोकप्रिय ढंग से, तकनीकी शब्दों के प्रयोगों से जहाँ तक हो सके बचते हुए मोटी मोटी बातें बता दी जांय जो आम पढ़े लिखे लोग भी समझ सकें।

इस सन्दर्भ में एक मुद्दा यह भी ध्यान में आया कि प्राचीन काल में भी सभी देशों में जनसामान्य की बोलचाल की भाषा अलग होती थी और उच्च ज्ञान को प्रकट करने वाली भाषा अलग। उदाहरण के लिये भारत में आयुर्वेद, गणित या अन्यान्य वैज्ञानिक विषयों की सारी पुस्तकें संस्कृत में लिखी गईं। धर्म शास्त्र या दर्शन की पुस्तकें, पुराण–इतिहास ग्रन्थ, काव्य आदि भी संस्कृत में लिखे गये। परन्तु संस्कृत केवल पढ़े लिखे वर्ग की भाषा थी। जनसामान्य की बोली भाषा तो प्राकृत, अपभ्रंश, पाली अर्धमागधी आदि थी। इन बोलचाल की भाषाओं में वैज्ञानिक ग्रन्थ नहीं लिखे जाते थे। यूरोप में भी विज्ञान की बातें केवल लैटिन में लिखी जाती थीं, अंग्रेजी, फ्रेंच या जर्मन भाषाओं के तत्कालीन रूपों में नहीं। इसलिये आज भी विज्ञान का सारा लेखन अंग्रेजी में ही होना उचित है, उसे जबर्दस्ती हिंदी में लाने का प्रयास करना व्यर्थ है।

परन्तु इस विचारधारा के विपरीत विचार भी उतने ही प्रभावपूर्ण ढंग से सामने आये। अब हिंदी में तकनीकी शब्दों की कोई कमी नहीं है। भारत सरकार के वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग ने हजारों – लाखों तकनीकी शब्दों का निर्माण तथा मानकीकरण कर दिया है। उनका यह बहुमूल्य कार्य अभी भी चल रहा है। इसलिये हिंदी में मौलिक – अंग्रेजी से अनुवादित नहीं – विज्ञान लेखन किया जाय तो कोई बाधा नहीं है। आज प्राचीन काल की तुलना में स्थितियाँ बहुत बदल चुकी है। अब ज्ञान का प्रचार प्रसार बहुत तेजी से हो रहा है। विज्ञान की हर बात, हर भाषा में इंटरनेट के माध्यम से पहुँच रही है। इसलिये किसी को यदि अपनी मातृ भाषा में या उस भाषा में जिसे वह सरलता से समझ सकता हो जानकारी दी जाय तो वह अधिक आसानी से सुपाच्य होगी। हर व्यक्ति के लिये पहले भाषा भी पढ़ो फिर विज्ञान भी पढ़ो इस दुहरे श्रम के स्थान पर अपनी ही भाषा में यदि वैज्ञानिक ज्ञान मिले तो अधिक सुकर होगा।

भाषा ज्ञान के सम्प्रेपण का माध्यम है। हर उस व्यक्ति को, जिसने अपने अध्ययन तथा शोध द्वारा कुछ विशिष्ट ज्ञान प्राप्त किया है, अपने ज्ञान के निष्कर्ष से सबको अवगत कराना चाहिये क्योंकि ज्ञान का अंतिम संबंध मनुष्य के जीवन से होता है। जो ज्ञान जनसामान्य के हित के लिये प्रयुक्त न होता हो वह ज्ञान व्यर्थ है, वन्ध्या है। इसलिये जनसामान्य को यह बताना कि इसमें तुम्हारा हित है वैज्ञानिकों का कर्तव्य है। अन्यथा संवादहीनता की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। यदि अच्छे और सच्चे डॉक्टर जनसाधारण को रोगों, चिकित्सा उपकरणों एवं दवाओं के बारे में उन्हें समझ में आये ऐसी भाषा में नहीं बतायेंगे तो नीम हकीम पनपेंगे ही। आज अणु शक्ति प्रकल्पों, बड़े–बड़े बांधों, कल कारखानों, नई नई दवाओं आदि के बारे में अधिकारी विद्वान् आम जनता से सीधे संपर्क में कम हैं इसलिये अधूरे ज्ञान वाले सफल होते दिखते हैं। विज्ञान का ज्ञान कोई ऐसा गुप्त दस्तावेज नहीं बना रहना चाहिये जिसे सबसे छुपाना हो। उसका उन्मुक्त प्रचार प्रसार होना चाहिये जो सबके समझ में आने वाली भाषा में ही हो सकता है। इसलिये विज्ञान परिचर्चा जैसी हिंदी विज्ञान पत्रिकाओं की आवश्यकता है और यही उनका महत्व है।

इन दोनों ही विचारधाराओं का यदि तुलनात्मक विवेचन किया जाय तो दूसरी बात अधिक तर्क संगत जान पड़ती है। चूंकि हमने अंग्रेजी में ही आधुनिक विज्ञान पढ़ा होता है इससिये हमें अंग्रेजी में लिखना–पढ़ना अधिक सुविधाजनक प्रतीत होता है परन्तु जो अंग्रेजी भाषी देश नहीं हैं वहाँ उनकी अपनी भाषाओं में भी अत्यन्त उच्च स्तर का अनुसंधान कार्य हो रहा है। रूस, चीन, जर्मनी फ्रांस या जापान के उदाहरण हमारे सामने हैं। वैज्ञानिक अनुसन्धान के लिय भाषा बाधा नहीं बननी चाहिये यह महत्वपूर्ण सूत्र है। संसार का सारा हर विषय का अधुनातन ज्ञान हिंदी में उपलब्ध करनाने की व्यवस्था हो, जो कि आज सहज संभाव है, तो वैज्ञानिक अनुसंधान के क्षेत्र में अनेकानेक नई–नई प्रतिभाएँ अधिक संख्या में आकर्षित होंगी। बाल विज्ञान कांग्रेस में दसवीं–बारहवी में पढ़ने वाले हिंदी माध्यम के विद्यालयों के मेधावी छात्र जब हिंदी मे अपनी शोध परियोजनाएँ प्रस्तुत करते हैं तो इस तथ्य का अनुभव अत्यन्त स्पष्ट रूप से हो जाता है।

परन्तु इस दिशा में काम करने की अभी बहुत आवश्यकता है। हर प्रदेश में विज्ञान परिषदें हैं, भाषा संस्थान हैं परन्तु हिंदी में विज्ञान लेखन के लिये जितना प्रोत्साहन मिलना चाहिए उतना अभी नहीं मिल रहा है। ऐसे संस्थानों के प्रकाशनों की सूचियाँ ही देख लें तो हिंदी में प्रकाशन अपेक्षाकृत कम ही दिखते हैं। उन्हें भी हिंदी में विज्ञान लेखक नहीं मिलते। मिले तो स्तरीय नहीं होते।

हमें इन सारी बातों पर विचार करना है। विज्ञान परिचर्चा जैसी पत्रिकाओं की सार्थकता इसी में है कि हम अधिक से अधिक नये–नये विज्ञान लेखक और बहुत बड़ी संख्या में विज्ञान पाठक तैयार कर सकें। विशेषकर विज्ञान विषयों की औपचारिक शिक्षा प्राप्त न करने वाले पाठक भी पत्रिका पढ़ने के लिये आकर्षित होंगे तभी हमारी सफलता है।

जगदीश चन्द्र भट्ट

उत्तराखण्ड के विज्ञान ऋषि 9

पद्मभूषण बोशी सेन

हिमालय के इस रमणीय, किन्तु जीवन-यापन की दृष्टि से जटिल पर्वतीय प्रदेश में प्राचीन काल से कितने यात्री और पर्यटक आए होंगे, इसका आकलन नहीं किया जा सकता। आने वालों में से अनेक व्यक्ति और जातियाँ यहीं बस गयीं; इसके उल्लेख भी पौराणिक तथा ऐतिहासिक अभिलेखों में मिलते हैं; किन्तु उनका व्यवस्थित आकलन करना भी कठिन है। प्राप्त जानकारी के अनुसार देश के दूसरे भागों से जो व्यक्ति यहाँ आकर यहीं रह गये; उनमें से प्रायः सभी इन पहाड़ों में आत्म-ज्ञान की प्राप्ति हेतु साधनारत रहे। यहाँ आकर पर्वतवासियों के जीवन को सुगम-सम्पन्न बनाने के उद्देश्य से समाजोत्थान की साधना करने वाले साधक कोई बिरले ही हैं।

आधुनिक भारत के ऐसे बिरले साधकों में सबसे पहले याद आने वाला एक नाम है- बोशी सेन; जिस नाम के साथ वैज्ञानिक अनुसंधान की अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति जुड़ी थी, लेकिन जिसने अत्यधिक परिश्रम के बाद भी अत्यल्प उपज देने वाली पर्वतीय कृषि की कठिनाइयों का आभास होते ही अपने सम्पूर्ण वैज्ञानिक अनुभव, ज्ञान और अनुसंधानों को कृषि की ओर मोड़ दिया और कलकत्ता जैसे सुविधा सम्पन्न महानगर को छोड़ कर एक छोटे-से पहाड़ी शहर अल्मोड़ा को अपना शोध केन्द्र बनाया।

प्रारम्भिक जीवन

माह नवम्बर, 1887 को कलकत्ता के निकट बांकुड़ा जिले के विष्णुपुर कस्बे में रामेश्वर सेन तथा प्रसन्नामोई के घर जन्मे डा0 बोशी सेन बचपन से ही अपने सभी भाई–बहनों में निराले थे। पिता की ग्यारह सन्तानों में से जीवित रहीं आठ सन्तानों में वे चौथे थे। पिता रामेश्वर सेन गणित, संस्कृत के विद्वान तथा उपनिषद–पुराणों के ज्ञाता थे, इसलिये उन्होंने लड़के का नाम वशिश्वर रखा; जिसका अर्थ ऋषि होता है। बंगालियों में 'अ' को 'ओ' की तरह उच्चरित करने की प्रवृत्ति के कारण 'व' का 'वो'/ 'बो' हो गया। घर में उन्हें बोशी कहा जाता था। आगे जाकर वही नाम प्रचलित हो गया। पिता के असामयिक देहावसान के कारण उनका परिवार उनकी ज्ञान की छाया से ही वंचित नहीं हुआ; आर्थिक दृष्टि से भी संकट में पड़ गया। बच्चों के सामने शिक्षा जारी रखना कठिन हो गया। तब बारह वर्ष के 'बशी' बीस मील की पैदल यात्रा करके अपनी विवाहित बहन के घर बाँकुड़ा गये और वहाँ आगे की पढ़ाई शुरू की।

सर जे0 सी0 बोस के साथ अनुसंधान

सन् 1911 में सेंट जेवियर्स कॉलेज, कलकत्ता से बी.एससी. की पढ़ाई पूरी करके सेन ने एम.एससी. में प्रवेश लिया, परन्तु धनाभाव के कारण आगे न पढ़ सके। उसी बीच वे पौधों में जीवन की खोज करने वाले विश्व प्रसिद्ध वैज्ञानिक सर जगदीश चन्द्र बोस के सम्पर्क में आये और उनके साथ बोस संस्थान में कार्य करने लगे। दोनों ने जापान, अमेरिका, इंगलैंड आदि देशों में अपने शोध पत्रा प्रस्तुत किये तथा व्याख्यान

दिये। रौयल सोसायटी द्वारा प्रकाशित अपने प्रथम शोध पत्रा को बोशी सेन ने गुरु दक्षिणा के रूप में सर बोस को समर्पित किया। बोशी ने 12 वर्ष तक एक दिन भी छुट्टी लिये बिना लगातार वहाँ शोध कार्य किया। बाद में बोस और सेन दोनों के बीच में दूरियाँ बढ़ गईं। सेन ने 1923 में कुछ समय तक यूनिवर्सिटी कॉलेज लन्दन में भी अनुसंधान कार्य किया।

विवेकानन्द प्रयोगशाला की स्थापना

बोस संस्थान छोड़ने के बाद 4 जुलाई, सन् 1924 को बोशी सेन ने कलकत्ता के बोसपाड़ा स्थित अपने किराये के छोटे से घर के रसोई के कमरे को ठीक–ठाक करके उसमें 'विवेकानन्द लैबोरेटरी' स्थापित की। प्रयोगशाला के उपकरण दो बक्सों के अन्दर रखे रहते थे। दिन में बोशी उन्हें निकालकर बक्सों के उपर रखते और एक स्टूल पर बैठकर वहीं काम करते। रात में इन्हीं दो बक्सों को मिलाकर उनके ऊपर बिस्तर बिछाकर सो जाते। पश्चिम बंगाल के तत्कालीन राज्यपाल श्री लार्ड लिट्टन ने इस लैब को देखने की इच्छा व्यक्त की; और वहाँ आकर श्री सेन के साथ एक घंटे तक विचार–विमर्श किया।

सेन पर स्वामी विवेकानन्द एवं रामकृष्ण परमहंस का गहरा प्रभाव था। सन् 1905 में बंगाल विभाजन के बाद वे स्वामी विवेकानन्द के प्रथम शिष्य स्वामी सदानन्द के सम्पर्क में आ गये थे। बोशी उन्हें अपना आध्यात्मिक गुरू मानते थे तथा श्री रामकृष्ण परमहंस की धर्मपत्नी शारदा माँ के प्रति विशेष श्रद्धा रखते थे। माँ का भी उनके प्रति विशेष प्रेम था। 1920 में एक बार माँ ने उनके पैतृक निवास विष्णुपुर आकर भोजन भी ग्रहण किया था। स्वामी जी अक्सर कहते थे; ''भारत को ऐसे चरित्रवान युवाओं की आवश्यकता है; जो बिना किसी स्वार्थ के देश के लिए कार्य कर सकें और राष्ट्र–निर्माण के लिए स्वयं को समर्पित कर सकें।'' इन बातों का युवा बोशी पर गहरा प्रभाव पड़ा और उन्होंने निःस्वार्थ सेवा का व्रत ले लिया। आगे जाकर उनकी निःस्वार्थ मानव–सेवा देख कर रामकृष्ण मिशन के कई कर्मयोगी यह कहते हुए भी सुने गये कि 'हम बाहर से भगुवा हैं; बोशी भीतर से भगुवा हैं।'

स्वामी विवेकानन्द के प्रति बोशी की इतनी गहन आस्था थी के वे स्वामीजी को साक्षात् अनुभव कर सकते थे। अपनी नयी प्रयोगशाला का नाम 'विवेकानन्द लैबोरेटरी' रखते समय उन्होंने स्वामीजी से सूक्ष्म रूप से इसकी आज्ञा माँगी। इस बात की जानकारी बाद में सेन के काग़जों में मिले स्वामीजी को सम्बोधित एक पत्रा से मिलती है। पत्रा का कुछ अंश इस प्रकार थाः ''स्वामीजी, मैंने आपका नाम इस संस्थान से जोड़ने का साहस किया है। आप जानते हैं कि मैं क्या कर सकता हूँ और क्या नहीं कर सकता हूँ। मेरे आशीषमय, परमप्रिय गुरू, मेरी आपसे प्रार्थना है कि मैं आपके पवित्र नाम को कलंकित न करूँ।''

4 जुलाई सन् 1902 को स्वामीजी की देहमुक्ति हुई थी, इसलिए बोशी सेन ने उनकी स्मृति स्वरूप 'लैबोरेटरी'की स्थापना दिवस के रूप में यही दिन चुना और प्रतिवर्ष इसके विशिष्ट समारोह की परम्परा भी आरम्भ की, जो अखण्ड रूप से आज तक चल रही है। बोशी सेन जिस दिन प्रयोगशाला के साथ अल्मोडा पहुँचे उसी दिन उसका उद्घाटन करना चाहते थे। उपकरण उस समय तैयार नहीं थे। उन्होंने लिटमस पेपर निकाला और वर्षा जल का पीएच जांच कर अपनी प्रयोगशाला को प्रारम्भ किया।

विवेकानन्द प्रयोगशाला का अल्मोड़ा स्थानानन्तरण

बोशी सेन ने सन् 1936 में विवेकानन्द प्रयोगशाला को स्थायी रूप से अल्मोड़ा में स्थापित कर दिया। जिस दिन वे प्रयोगशाला के साथ अल्मोड़ा पहुंचे; उसी दिन उसका उद्घाटन करना चाहते थे। उपकरण उस समय तैयार नहीं थे। उन्होंने 'लिट्मस पेपर' निकाला और वर्षा जल का पी. एच. जाँचकर अपनी प्रयोगशाला का प्रारम्भ किया। इसका संचालन–संपादन कई वर्षों तक इंगलैंड और अमेरिका से प्राप्त अनुदानों से होता रहा। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद तथा उत्तर प्रदेश सरकार से भी कुछ अनुदान मिलने लगा, जिससे अनुसंधानशाला निजी प्रयोगशाला के रूप में कार्य करती रही। सन् 1959 में उन्होंने इसे उत्तर प्रदेश शासन को हस्तान्तरित कर दिया। अपने जीवन–पर्यन्त वे इसके निदेशक का कार्य करते रहे। 1974 से प्रयोगशाला भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के एक संस्थान के रूप में कार्य करने लगी।

उपलब्धियाँ

अल्मोड़ा में पौधों का वैज्ञानिक अध्ययन करते हुए सेन ने अनेक नयी खोजें कीं। उन्होंने पौधों के शरीर क्रिया विज्ञान के अध्ययन के साथ ही वसन्तीकरण की प्रक्रिया से पौधों द्वारा प्रकृति के बदलावों की जांच की। जे.सी. बोस के कार्य ऊत्तकों (टिश्यूज़) से सम्बन्धित थे; जबकि बोशी ने उक्त तकनीकों को जीवित कोशिका के साथ कार्य करने के लिए अपनाया। उन्होंने लिखा है : ''1935 में इंटरनेशनल फिजियोलौजिकल कांग्रेस के प्रतिनिधि के रूप में रूस के अपने दौरे के समय भारतीय कृषि के लिए वसन्तीकरण (बर्नेलाइजेशन) की सम्भावनाओं का पता लगाने की मेरी रुचि जागृत हुई।''

''भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद ने जीवित प्रसर (लिविंग प्रोटोप्लाज्म) और वसन्तीकरण की आधारभूत समस्याओं पर कार्य करने की एक परियोजना के लिए धन प्रदान किया। भारत में गेहूँ तथा सरसों के वसन्तीकरण के प्रयोग के पहले सफल परिणाम हमने 1938 में प्रकाशित किए।''

वसन्तीकरण के सफल अन्वेषण के कारण यह योजना 1937 से 1939 तक चलती रही। आगे जाकर उन्होंने प्लांट ब्रीडिंग और प्लांट इंट्रोडक्शन विषयक शोध भी शुरू किये और इस छोटी–सी प्रयोगशाला द्वारा भारत के पहले संकर मक्का, प्याज, ज्वार और बाजरा का उत्पादन किया। तब तक भारत के किसान गोल दानों वाली परम्परिक मक्का ही उगाते थे, किन्तु उसकी उपज बहुत कम थी। दन्ताकार दानों वाली अमेरिकी मक्का की उपज अधिक थी, किन्तु उसे किसान पसन्द नहीं करते थे। बोशी सेन ने विवेकानन्द प्रयोगशाला में इन दोनों प्रजातियों को मिलाकर ऐसी संकर (हाईब्रिड) मक्का तैयार की; जिसमें स्वाद, तत्व और उपज की दृष्टि से दोनों किस्मों के गुण विद्यमान थे। अखिल

भारतीय समन्वित संकर मक्का परीक्षणों में यह सफल सिद्ध हुई। यह मक्का किसानों में काफी लोकप्रिय हुई। इसी प्रकार यहां पर संकर प्याज, संकर ज्वार, बाजरा, भिंडी, टमाटर, जौ, जई, गेहूँ, धान आदि की अधिक उपज देने वाली उन्नत किस्में भी विकसित हुईं। वैज्ञानिक सेन अपने युवा वैज्ञानिकों तथा कार्यकर्ताओं को संकर बीजों के उत्पादन की सरल तकनीकों में प्रशिक्षित करते थे। बाद में वही विधि कृषकों को भी बताई जाती थी।

सेन ने विदेशों से गेहूँ, धान, जौ, जई, शकरकंद, स्ट्रॉबेरी आदि की उन्नत किस्मों के बीज मंगाने के बाद उनका परीक्षण करके उन्हें व्यापक स्तर पर प्रचलित करवाया। विभिन्न फसलों के अतिरिक्त चारे की उन्नत प्रजातियाँ मँगाकर, अध्ययनोपरान्त उनका प्रचलन भी बढ़ाया; जैसे कुटजू और जई। इसके साथ ही संकर खजूर, पीकानट, ऐवोकाडो (फल) तथा कपास, रेडस्क्विल, रेडवुड (वृक्ष) एवं लेमन ग्रास (नींबू घास) आदि मँगाकर उनके भी अध्ययन किये। बाद में स्थानीय काश्तकारों ने भी इनका उत्पादन आरम्भ किया।

श्री सेन को जीव द्रव्यीय कोलाइडों के स्थानान्तरण के लिए माइक्रोइलेक्ट्रोडों के आविष्कार के अतिरिक्त अन्य कई विषयों में सफलता मिली। पौध क्रिया वैज्ञानिक बोशी सेन अपनी आधारीय खोजों के साथ–साथ कृषि सम्बन्धी अन्य समस्याओं के निराकरण के प्रति भी सचेत रहते थे। 1955 में परमाणु ऊर्जा पर लिखे लेख का समापन करते हुए उन्होंने लिखाः ''विज्ञान के इन प्रयोगों में भारत अन्य देशों से काफी पीछे है। हमारे कृषि अनुसंधान केन्द्रों में विलम्ब किए बिना व्यापक स्तर पर अधिकाधिक कार्य किया जाना आवश्यक है; जिससे हम कृषि सम्बन्धी–जटिल समस्याओं को सुलझा सकें और साथ ही अपने शोधों द्वारा इसके बुनियादी ज्ञान की भी श्रीवृद्धि कर सकें।''

श्री सेन ने विवेकानन्द अनुसंधानशाला में 1956 से उष्मन्यूट्रानों (थर्मलन्यूट्रान्स) के 'आयोनाइजिंग रेडिएशन' से बीजों को प्रभावित करके उत्परिवर्तित अभिजनन (म्यूटेशन ब्रीडिंग) के प्रयोग आरम्भ किये। इसके बड़े उत्साहवर्द्धक परिणाम सामने आये। इस विषय पर उनका शोध आलेख 'परमाणविक शक्ति के शान्तिपूर्ण उपयोग' विषय पर सन् 1958 में जेनेवा में आयोजित द्वितीय अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन के कार्यवाही–विवरण में प्रकाशित हुआ।

समुद्रतल से 12500 फीट की ऊँचाई पर स्थित मिलम (मुन्स्यारी, जनपद पिथौरागढ़) की सदियों से खाली पड़ी भूमि पर 1951 में विवेकानन्द अनुसंधानशाला में तैयार गेहूं के बीजों से फसल उगाई गई तो बहुत उत्साहजनक परिणाम सामने आए। उस फसल से प्राप्त गेहूं के बीजों को कुमाऊँ के सबसे बड़े उत्तरायणी मेले (बागेश्वर) में 1952 में प्रथम पुरस्कार प्राप्त हुआ। बागेश्वर मेले में 1959 और 1960 में भी अनुसंधानशाला से लिए गए धान के बीजों से प्राप्त फसल की पैदावार सर्वाधिक रही। इस प्रकार बोशी सेन के प्रयासों से इस दुर्गम क्षेत्रा के निवासियों को कृषि की एक नवीन दिशा प्राप्त हुई। उसके बाद बोशी सेन के मित्रा तथा तत्कालीन प्रधानमंत्रा पं0 जवाहर लाल नेहरू द्वारा अधिक ऊँचाई वाले स्थानों पर कृषि की सम्भावनाओं का पता लगाने की इच्छा व्यक्त करने पर 1960 में लेह–लद्दाख क्षेत्रा का सर्वेक्षण किया गया। तदुपरान्त वहाँ भी एक शोध शाला स्थापित की गई। विवेकानन्द अनुसंधानशाला में कार्यरत वैज्ञानिक मोहन चन्द्र जोशी की देखरेख में सेना तथा वहां की स्थानीय जनता के साथ मिलकर लद्दाख में कृषि के जो प्रयास आरम्भ हुए; उन्हें मिली अपूर्व सफलता के फलस्वरूप भारत के रक्षा विभाग द्वारा इसे कृषि शोध इकाई के रूप में अंगीकृत किया गया। आगे जाकर भारत के विभिन्न पर्वतीय क्षेत्रों में डी.आर.डी.ओ. के अन्तर्गत आज जो दो संस्थान – डी. आई. एच. ए. आर. (लेह में स्थित) तथा डी. आई. बी. ई. आर (पिथौरागढ़) नाम से उच्च पर्वतीय क्षेत्रों में अनुसंधान कर रहे हैं; वे भी बोशी सेन के प्रयासों के प्रतिफल हैं। श्री मोहन चन्द्र जोशी इसे अपने गुरू बोशी सेन की प्रेरक शक्ति का परिणाम मानते हैं।

साठ के दशक में देश में अन्न की कमी के कारण अमेरिका से गेहूँ मँगाया जाता था। उसके बाद देश में उन्नत खेती के अभियान तेज हुए। वैज्ञानिक अनुसंधानों द्वारा गेहूँ का उत्पादन बढ़ाने के कार्यक्रमों के सिलसिले में अमेरिका के गेहूँ वैज्ञानिक डॉ. ग्लेन ऐन्डर्सन भारत आये। डॉ. एम. एस. स्वामीनाथन के साथ जब वे अल्मोड़ा आये तो प्रार्थना के बाद बोशी सेन ने एक छोटा बक्सा (जिसमें स्वामी विवेकानन्द के कुछ बाल रखे हुए थे) उठाकर उन दोनों के सिर पर रखते हुए कहा : 'गेहूँ अभियान को महान सफलता मिलेगी।' डॉ. स्वामीनाथन ने लिखा है कि ''इससे हमें बहुत बड़ी ताकत मिली 1968 में जब इन्दिरा गाँधी ने 'गेहूँ क्रान्ति' की सफलता पर टिकट जारी किया तब मैंने सेन को लिखा कि इस गेहूँ क्रान्ति के पीछे आपके द्वारा अप्रैल 1964 में हमें दिये गये उस आशीर्वाद की आध्यात्मिक शक्ति ने कार्य किया है।''

विदेश यात्राएं

वैज्ञानिक बोशी सेन ने अपने अनुसंधानों के संदर्भ में अनेक बार विदेश यात्राएँ की। 1911 में अपनी प्रारम्भिक विदेश यात्राओं के दौरान ही सर जे0 सी0 बोस से उनकी मैत्री प्रगाढ़ हुई थी। दोनों ने जापान, इंगलैंड तथा अमेरिकी देशों की अनेक यात्राएं साथ–साथ की थीं। वे अपनी स्वतंत्रा प्रयोगशाला का संचालन भी अनेक वर्षों तक विदेशों की सहायता से ही करते रहे। 1935 में उन्होंने इंटरनेशनल फिजियोलौजिकल कांग्रेस के प्रतिनिधि के रूप में रूस की यात्रा की। 1955 में वे कृषि मंत्रालय की ओर से सं. रा. अमेरिका स्थित ओरिज में 'परमाणुविक शक्ति के शान्तिपूर्ण उपयोग' विषयक पाठ्यक्रम में भाग लेने गये। पत्र व्यवहार के माध्यम से भी वे हमेशा विदेशी वैज्ञानिकों एवं अन्वेषकों से सम्पर्क करते रहते थे। तकनीकों एवं जानकारियों के आदान–प्रदान से तथा बीजों को मँगाकर भी उन्होंने भारतीय कृषि के उन्नयन की दिशा में उल्लेखनीय खोजें की।

विदेशों में कार्य करने के उन्हें अनेक प्रलोभन मिले। इस पर उनका जवाब होता था : ''पश्चिम में तुम्हारे पास बहुत सारे वैज्ञानिक हैं, लेकिन भारत में उनकी कमी है। इसलिए मुझे लगता है कि मैं थोड़ा–बहुत जितना भी जानता हूँ; उसे मैं देश की सेवा में समर्पित करूँ।''

विशिष्ट सम्मान

बोशी सेन ने अपने कुछ समर्पित वैज्ञानिक सहयोगियों की सहायता से 200 से अधिक वैज्ञानिक लेख लिखे। वह देश और विदेश की अनेक संस्थाओं के 'फैलो' तथा सदस्य रहे। साथ ही वे अमेरिका, इंगलैंड, हालैंड एवं सोवियत संघ के अनेक अन्तर्राष्ट्रीय पौध शरीर क्रिया विज्ञान तथा वानस्पतिक कांग्रेस के प्रतिनिधि भी रहे थे। कृषि अनुसंधान के क्षेत्रा में विशिष्ट योगदान हेतु भारत सरकार ने 1957 में सेन को पद्मभूषण सम्मान से विभूषित किया। वर्ष 1962 में अमेरिका के वाटूमल फाउंडेशन ने भारतीय कृषि में असाधारण वैज्ञानिक कार्य हेतु उन्हें वाटूमल पुरस्कार प्रदान किया। 1971 में उत्तर प्रदेश कृषि विश्वविद्यालय (वर्तमान में गोविन्द बल्लभ पन्त कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय) ने अपने आठवें दीक्षान्त समारोह में नोबल पुरस्कार विजेता नार्मन बोरलॉग के साथ उन्हें भी डॉक्टर ऑफ साइंस की उपाधि प्रदान की। इस अवसर पर संकर मक्का व अन्य फसलों के माध्यम से हरित क्रान्ति को बढ़ावा देने के लिए किसानों की ओर से उन्हें एक चांदी की प्लेट भी भेंट की गयी।

जीवन संगिनी

बोशी की पत्नी श्रीमती गर्ट्युड इमरसन एक प्रसिद्ध पत्रकार और लेखिका थीं। वे अमेरिका की विश्व प्रसिद्ध पत्रिका 'एशिया' के सम्पादक मंडल में रह चुकी थीं। 1932 में विवाह के बाद से वे कुन्दन हाऊस, अल्मोड़ा में बोशी के साथ रह कर अपना लेखन कार्य करती हुईं बोशी के कार्यों में पूर्ण सहयोग भी करती रहीं। 31 अगस्त, 1971 को बोशी सेन के देहावसान के पश्चात् गर्ट्यूड ने उनकी स्मृति में कुन्दन हाऊस के उद्यान में एक गुलाब वाटिका बनाई तथा अल्मोड़ा शहर के मध्य में माल रोड स्थित गांधी पार्क के सामने एक क्लॉक टावर निर्मित कराया। श्रीमती सेन डॉ सेन के जाने के बाद भी कुन्दन हाऊस में ही रह कर विवेकानन्द पर्वतीय कृषि अनुसंधान संस्थान को परामर्श देती हुई अपना लेखन कार्य करती रहीं। उनके मानवतावादी दृष्टिकोणयुक्त लेखन तथा सामाजिक कार्यों के लिए भारत सरकार ने 1976 में उन्हें 'पद्मश्री' से सम्मानित किया।

अनुशासन और उदारता

डा0 सेन अपने निजी जीवन में अत्यन्त अनुशासित तथा कार्य और लक्ष्य के प्रति पूर्ण समर्पित थे। प्रातः काल एक घंटा ध्यान–साधना करने के पश्चात् सुबह से लेकर रात में देर तक कार्य करना उनका नियम था। वे दूसरों से भी अनुशासन की अपेक्षा रखते थे। दूसरी ओर वे दुखियों, अभावग्रस्तों और छोटे से छोटे स्तर के मनुष्यों के प्रति अत्यन्त कोमल, उदार और दयालु थे। उनके कठोर अनुशासन और कोमल व्यवहार के अनेक संस्मरण उनके साथ कार्य कर चुके वैज्ञानिकों–कर्मचारियों को आज भी शक्ति और स्नेह का अनुभव कराते हैं। संस्थान के स्थापना दिवस को 'आम दिवस' के रूप में मनाये जाने की परम्परा इसका एक जीवन्त उदाहरण है। 4 जुलाई के इस दिवस को बाजार से थोक में उत्तम प्रकार के आम लाने के बाद उन्हें पहले पोटाश के पानी से, फिर सादे पानी से अच्छी तरह धोने के बाद छोटे–बड़े सभी को भर पेट खाने को दिये जाते थे; जिससे कम वेतन पाने वाले मजदूर– कर्मचारी भी कम से कम एक दिन तृप्त हो सकें। इसके लिए उन्होंने एक अलग फंड बनाया। संस्थान में यह परम्परा आज भी विद्यमान है। उनकी प्रेरक शक्ति से आज तक यह संस्थान उनके द्वारा चिन्हित पथ पर प्रगति कर रहा है।

गर्ट्युड इमरसन और बोशी सेन की यह जोड़ी आजीवन मानव सेवा के लिए इस तरह समर्पित रही कि उनके सम्पर्क में आये तथा उनकी शक्तियों से प्रभावित सभी लोग आज भी मन ही मन उन्हें पूजते हैं।

निदेशक
विवेकानन्द पर्वतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, अल्मोड़ा

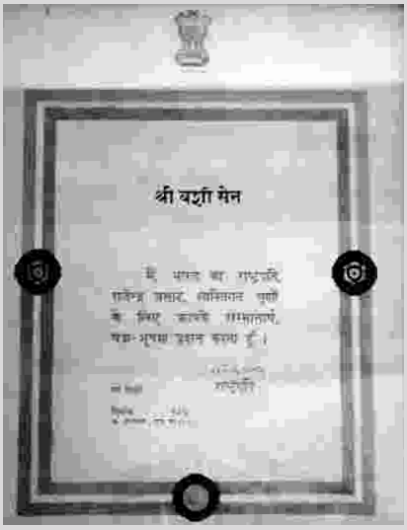

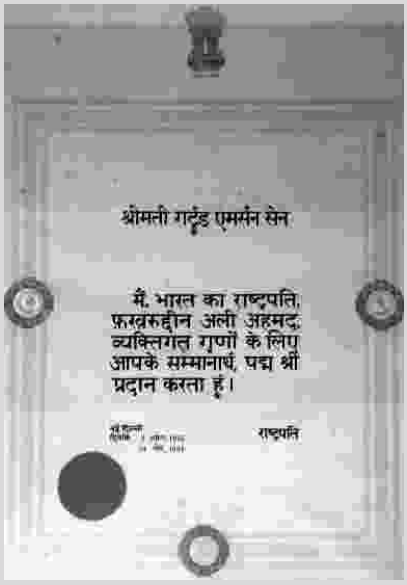

उत्तराखण्ड के
विज्ञान संस्थान 6

जगदीश चन्द्र भट्ट

विवेकानन्द पर्वतीय कृषि अनुसंधान संस्थान,

अल्मोड़ा-एक अवलोकन

4 जुलाई विवेकानन्द पर्वतीय कृषि अनुसंधान संस्थान के लिए सर्वाधिक महत्वपूर्ण दिन है। 'पौधों में भी जीवन है; की खोज करने वाले प्रसिद्ध वनस्पति वैज्ञानिक सर जगदीश चन्द्र बोस के सहयोगी रहे प्रसिद्ध पादप कार्यिकी वैज्ञानिक बोशी सेन ने सन् 1924 में कलकत्ता के आठ, बोस पाड़ा के रसोई घर में इसी दिन विवेकानन्द प्रयोगशाला के नाम से इसकी स्थापना की थी। स्वामी विवेकानन्द के अनुयायी होने के कारण प्रो. सेन समाजोत्थान के कार्य को भी आध्यात्मिक साधना का अंग मानते थे। संस्थान की स्थापना का विचार आते ही उन्हें प्रेरणा हुयी कि उसका नाम स्वामी जी के नाम पर रखा जाय, प्रो. सेन के प्रपत्रों में मिले स्वामी जी को सम्बोधित एक पत्रा में इसके लिए उन्होंने उनसे अनुमति मांगी थी। 4 जुलाई स्वामी विवेकानन्द का महाप्रयाण दिवस होने के कारण उन्होंने यही दिन अपनी प्रयोगशाला की स्थापना के लिए चुना।

संस्थान का इतिहास

'विवेकानन्द लैब' नाम की इस प्रयोगशाला को सन् 1936 में स्थायी रूप से अल्मोड़ा में स्थानान्तरित करके उन्होंने इसके माध्यम से पर्वतीय कृषि को केन्द्रित कर नये–नये प्रयोग और अनुसंधान प्रारम्भ किए। सन् 1959 में यह प्रयोगशाला उत्तर प्रदेश शासन को हस्तान्तरित हो गयी। उसके बाद 1960 में तत्कालीन प्रधानमंत्री नेहरूजी के सुझाव पर उच्च पर्वतीय क्षेत्रों में कृषि–विकास अनुसंधान के उद्देश्य से लेह, लद्दाख में नयी कार्य योजना आरम्भ की गयी। लद्दाख कार्य योजना का यह केन्द्र आगे चलकर भारत के रक्षा विभाग के अन्तर्गत कार्य करने लगा और इसी के परिणामस्वरूप डी.आर.डी.ओ. के वर्तमान में लेह लद्दाख एवं पिथौरागढ़ में कार्यरत कृषि सम्बन्धित संस्थान उच्च उन्नतांश अनुसंधान रक्षा संस्थान डी.आइ. एच.आर. एवं रक्षा जैव ऊर्जा अनुसंधान संस्थान डी.आइ.बी.ई.आर. अस्तित्व में आये। सन् 1971 में अपने देहावसान तक पद्मभूषण प्रो. बोशी सेन प्रयोगशाला के अवैतनिक निदेशक बने रहे। उनके देहावसान के पश्चात् इस प्रयोगशाला के महत्वपूर्ण योगदान को देखते हुए 1974 में तत्कालीन प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी की इच्छा एवं डॉ. एम.एस. स्वामीनाथन के प्रयासों से इसे भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, दिल्ली के अन्तर्गत उत्तर–पश्चिमी हिमालयी क्षेत्रा (उत्तराखण्ड, हिमांचल प्रदेश, जम्मू तथा कश्मीर) के कृषि विकास सम्बन्धी अनुसंधान का दायित्व मिला। तब से यह एक पूर्ण संस्थान के रूप में पर्वतीय क्षेत्र में उगाई जाती विभिन्न फसलों (अनाज, दाल, सब्जियाँ आदि) के सुधार, सुरक्षा, उत्पादन–वृद्धि एवं प्रचार–प्रसार के साथ–साथ कृषि से जुड़े विभिन्न सामाजिक सरोकारों और प्राकृतिक संसाधनों के प्रबन्धन पर कार्य कर रहा है। भारतीय कृषि अनुसन्धान परिषद के सम्पूर्ण देश में स्थित विभिन्न संस्थानों के नाम वहां के अनुसन्धान–विषय के अनुरूप रखे गए हैं; जैसे धान अनुसंधान निदेशालय, भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, भारतीय पशु अनुसंधान संस्थान आदि; किन्तु अल्मोड़ा के इस संस्थान का नाम इसके संस्थापक की इच्छा का सम्मान करते हुए स्वामी विवेकानन्द के नाम पर ही बना हुआ है।

इस वर्ष 4 जुलाई 2012 को विवेकानन्द पर्वतीय कृषि अनुसंधान संस्थान का स्थापना दिवस काफी आनन्द और उत्साहपूर्ण वातावरण में सम्पन्न हुआ। प्रातःकाल संस्थान के प्रथम प्रयोगशाला गृह कुन्दन हाऊस के पूजा घर में पूजा–आराधना के उपरान्त संस्थान के प्रवेशद्वार पर स्थापित स्वामी विवेकानन्द की मूर्ति पर पुष्पांजलि करने के पश्चात् संस्थान के सभागार में एक गोष्ठी सम्पन्न हुई। गोष्ठी में निदेशक डॉ. जे. सी. भट्ट ने संस्थान के विभिन्न प्रयोगों, प्रसार कार्यक्रमों तथा अन्य उपलब्धियों का सचित्र प्रदर्शन करते हुए विवरण प्रस्तुत किया। अन्य संस्थानों तथा राज्य सरकार के कृषि विभाग आदि विभागों के प्रतिनिधियों ने संस्थान के क्रिया–कलापों पर अपनी समीक्षात्मक प्रतिक्रियाएं व्यक्त करते हुए महत्वपूर्ण सुझाव भी दिये। संस्थान के कुछ सेवानिवृत्त वैज्ञानिकों तथा प्रो. सेन के साथ पिछली सदीं के छठे दशक में कार्य कर चुके रक्षा कृषि अनुसंधानशाला के पूर्व निदेशक श्री एम. सी. जोशी ने श्री बोशी सेन के साथ के अपने संस्मरण सुनाने के साथ ही संस्थान की अब तक की प्रगति पर प्रशंसात्मक टिप्पणियों सहित महत्वपूर्ण सुझाव दिये। कार्यक्रम में मुख्य अतिथि के कर कमलों से संस्थान में कार्यरत वैज्ञानिकों, अधिकारियों और कर्मचारियों के मेधावी बच्चों तथा किसानों को पुरस्कृत भी किया गया।

संस्थान का हवालबाग

हवालबाग स्थित प्रयोगशाला

इस बार के समारोह के मुख्य अतिथि भा0 कृ0 अनु0 परिषद के उपमहानिदेशक (फसल विज्ञान) डॉ. स्वपन कुमार दत्ता थे।

अल्मोड़ा परिसर का एक

उन्होंने अपने सम्बोधन में पर्वतीय कृषि को विशिष्ट बताते हुए कहा कि अल्मोड़ा स्थित यह संस्थान केवल उत्तराखंड की ही नहीं; वरन् पूरे देश की सेवा कर रहा है और आज विश्व में प्रसिद्ध हो रहा है। अब विज्ञान को भूमण्डलीय विज्ञान बनने के साथ ही स्थानीय किसानों से भी जुड़ना है, इसलिए नये विज्ञान की तकनीकें पहाड़ों के स्थानीय किसानों तक पहुँचाएं। स्थापना दिवस को 'आम दिवस' के रूप में मनाये जाने के संदर्भ में उन्होंने टैगोर को याद किया; जो शान्ति निकेतन में पौष मेले के अन्तर्गत किसानों के लिए खुला उत्सव आयोजित करते थे।

कृषक को सम्मानित करते हुए भा0 कृ0 अनु0 परिषद के उपमहानिदेशक (फसल विज्ञान)

अन्त में जलपान हुआ; जिसमें प्रति वर्ष की भाँति समस्त अतिथियों एवं संस्थान के समस्त कर्मचारियों और मजदूरों तक के लिए भर पेट आम खाने की व्यवस्था की गई थी। यह परम्परा डॉ. सेन ने इस आशय से प्रारम्भ की थी कि कम वेतन पाने वाले कर्मचारी भी वर्ष में कम से कम एक दिन भर पेट आम खाकर तृप्त हो सकें।

स्थापना दिवस पर आम वितरण का एक दृश्य

संस्थान के प्रमुख उद्देश्य

- उत्तर–पश्चिमी हिमालयी क्षेत्रों के लिए फसल उन्नयन, संसाधनों का प्रबन्धन, अधिक उत्पादन एवं फसल सुरक्षा सम्बन्धी विषयों पर अनुसंधान।
- स्थानीय जननद्रव्यों का संरक्षण करते हुए पर्वतीय क्षेत्रों की प्रमुख फसलों के लिए बुनियादी एवं सुसंगत रणनीतिक अनुसंधान।
- तकनीकी हस्तान्तरण व प्रशिक्षण कार्यक्रम तथा प्रसार कार्यविधि सम्बन्धी अनुसंधान

शोध उपलब्धियाँ

वर्तमान में यह संस्थान अपने लक्ष्य; **''स्थान आधारित विविधता के माध्यम से पर्वतीय कृषि में पारस्थितिकीय टिकाऊपन लाने और उसकी उत्पादकता बढ़ाने''** के उद्देश्य से एक बहुफसली अनुसंधान संस्थान के रूप में कार्य कर रहा है। संस्थान को देश में मक्का की पहली संकर किस्म वी.एल. मक्का 54 एवं प्याज में वी.एल. प्याज 67 को विकसित करने का गौरव प्राप्त है। संस्थान द्वारा खाद्यान्न एवं सब्जी फसलों की अनेक किस्में विकसित की गईं तथा उत्पादन वृद्धि हेतु इन किस्मों की उन्नत सस्य विधियोंय अन्तःखेती, फसल सुरक्षा पद्धतियों व फसलचक्रोंय का विकास किया गया है। यहाँ हुए अनुसंधानों से अनेक कृषक लाभान्वित हुए और इन महत्वपूर्ण शोध कार्यों के लिए संस्थान को दो बार (2000 तथा 2007) भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् के 'सरदार पटेल सर्वश्रेष्ठ संस्थान' पुरस्कार से सम्मानित किया जा चुका है। इसके अलावा वर्तमान में संस्थान में फसल उन्नयन, फसलोत्पादन, फसल सुरक्षा एवं सामाजिक विज्ञान विभाग कार्यरत हैं। अल्मोड़ा मुख्यालय से 13 किमी. दूर हवालबाग में इसका लगभग 92 हैक्टेयर क्षेत्रफल का प्रक्षेत्र है, जहाँ पर पर्वतीय कृषि की विविध फसलों एवं उनके विभिन्न आयामों पर शोध कार्य किये जाते हैं।

संस्थान का उद्देश्य पर्वतीय क्षेत्रा की जलवायु के अनुकूल टिकाऊ और लाभदायक कृषि पद्धतियों का विकास करना है, जिससे इस क्षेत्र को खाद्यान्न उत्पादन में वृद्धि द्वारा आर्थिक रूप से सबल बनने में सहायता मिल सके।

उच्च उपजक्षमता एवं रोगरोधी प्रजातियों का विकास संस्थान का एक महत्वपूर्ण कार्यक्रम है। अब तक संस्थान की 25 फसलों की 125 से अधिक उन्नत किस्में केन्द्र तथा राज्य प्रजाति विमोचन समितियों द्वारा विमोचित की गई हैं; जिनमें से अनेक प्रजातियां हिमालयी क्षेत्रों तथा देश के अन्य भागों हेतु विमोचित हैं, जिनमें से कुछ प्रजातियां तालिका–1 में इंगित की जा रही हैं। संस्थान द्वारा विकसित पर्वतीय फसलों की अनेक प्रजातियाँ यहाँ के कृषकों के बीच लोकप्रिय हुई हैं (तालिका– 2)।

तालिका–1 देश के विभिन्न क्षेत्रों हेतु केन्द्रीय स्तर पर विमोचित की गयी प्रजातियां

क्रम सं.	प्रजाति	क्षेत्र
1.	वी.एल. धान 221	उत्तर–पश्चिमी पर्वतीय क्षेत्र; विशेष रूप से उत्तराखण्ड एवं हिमाचल प्रदेश।
2.	वी.एल. धान 61	उत्तराखण्ड के पर्वतीय क्षेत्र एवं हिमाचल प्रदेश।
3.	विवेक धान 62	उत्तराखण्ड, हिमाचल प्रदेश, मणिपुर एवं पश्चिम बंगाल (1,200 मी.)।
4.	वी.एल. धान 81	उत्तराखण्ड, हिमाचल प्रदेश एवं मेघालय (1,300 मी)।
5.	विवेक धान 82	उत्तराखण्ड, हिमाचल प्रदेश एवं मेघालय के पर्वतीय क्षेत्रा।
6.	वी.एल. धान 86	रोपित एवं सिंचित अवस्थाओं के लिये उत्तराखण्ड एवं हिमाचल प्रदेश के अधिक ऊँचाई वाले क्षेत्रा।
7.	वी.एल. गेहूँ 616	उत्तराखण्ड, हिमाचल प्रदेश एवं जम्मू–कश्मीर के पर्वतीय क्षेत्रा।
8.	वी.एल. गेहूँ 738	उत्तराखण्ड, हिमाचल प्रदेश एवं जम्मू–कश्मीर के पर्वतीय क्षेत्रा।
9.	वी.एल. गेहूँ 804	उत्तराखण्ड, हिमाचल प्रदेश, जम्मू–कश्मीर, मणिपुर एवं पश्चिम बंगाल के पर्वतीय क्षेत्रा।
10.	वी.एल. गेहूँ 829	उत्तराखण्ड, हिमाचल प्रदेश एवं जम्मू–कश्मीर के पर्वतीय क्षेत्रा।
11.	वी. एल. गेहूँ 832	उत्तराखण्ड, हिमाचल प्रदेश जम्मू–कश्मीर एवं पश्चिम बंगाल के ऊँचाई वाले क्षेत्रा (झ 5500 फीट)।
12.	वी.एल. गेहूँ 892	उत्तरी पर्वतीय क्षेत्र।
13.	वी.एल. गेहूँ 907	उत्तरी पर्वतीय क्षेत्र।

14.	वी.एल. बारले 85	उत्तराखण्ड पर्वतीय क्षेत्र में कार्बनिक खेती हेतु।
15.	हिम 129	हिमालय के पर्वतीय क्षेत्रा, गुजरात, मध्य प्रदेश एवं राजस्थान।
16.	विवेक मेज़ हाईब्रिड 15	क्षेत्रा 1 (हिमालयी क्षेत्रा)।
17.	विवेक मेज़ हाईब्रिड 21	क्षेत्रा I (उत्तराखण्ड, हिमाचल प्रदेश, जम्मू–कश्मीर एवं उत्तर–पूर्वी हिमालयी क्षेत्र), क्षेत्र II (दिल्ली, पंजाब, हरियाणा, पश्चिम उत्तर प्रदेश) एवं क्षेत्र IV (महाराष्ट्र, आन्ध्र प्रदेश, कर्नाटक एवं तमिलनाडु)।
18.	विवेक मेज़ हाईब्रिड 25	क्षेत्रा I (उत्तराखण्ड, हिमाचल प्रदेश, जम्मू–कश्मीर एवं उत्तर–पूर्वी हिमालयी क्षेत्र)।
19.	विवेक क्यू.पी.एम. 9	क्षेत्र I (उत्तराखण्ड, हिमाचल प्रदेश, जम्मू–कश्मीर एवं उत्तर–पूर्वी हिमालयी क्षेत्र) एवं क्षेत्र IV (महाराष्ट्र, आन्ध्र प्रदेश, कर्नाटक एवं तमिलनाडु)।
20.	विवेक मेज़ हाईब्रिड 33	उत्तराखण्ड एवं हिमाचल प्रदेश के हिमालयी क्षेत्र।
21.	विवेक संकुल मक्का 35	क्षेत्र I (उत्तराखण्ड, हिमाचल प्रदेश, जम्मू–कश्मीर एवं उत्तर–पूर्वी हिमालयी क्षेत्र)।
22.	विवेक मेज़ हाईब्रिड 39	क्षेत्रा I (उत्तराखण्ड, हिमाचल प्रदेश, जम्मू–कश्मीर एवं उत्तर–पूर्वी हिमालयी क्षेत्र)।
23.	विवेक मेज़ हाईब्रिड 43	क्षेत्रा III (पूर्वी उत्तर प्रदेश एवं देश के पूर्वी राज्य) एवं क्षेत्र V (भारत के मध्य पश्चिमी क्षेत्र)
24.	वी.एल. मडुवा 149	तमिलनाडु एवं आन्ध्र प्रदेश के अलावा अन्य सभी कदन्न उत्पादित करने वाले क्षेत्र।
25.	वी.एल. मडुवा 315	उत्तराखण्ड के पर्वतीय क्षेत्रों में जैविक अवस्था हेतु।
26.	वी.एल. मादिरा 29	तमिलनाडु एवं आन्ध्र प्रदेश के अलावा सम्पूर्ण भारत
27.	वी.एल. मादिरा 207	तमिलनाडु एवं गुजरात के अलावा अन्य सभी राज्य
28.	वी.एल. गहत 15	उत्तरी एवं मध्य भारत।
29.	वी.एल. राजमा 125	उत्तराखण्ड पर्वतीय क्षेत्र।
30.	वी.एल. मटर 45	उत्तराखण्ड, हिमाचल प्रदेश एवं जम्मू–कश्मीर के पर्वतीय क्षेत्र।
32.	वी.एल. मसूर 507	उत्तराखण्ड, हिमाचल प्रदेश, जम्मू–कश्मीर एवं उत्तर–पूर्वी हिमालयी क्षेत्र।
33.	वी.एल. सोया 47	उत्तर–पश्चिमी पर्वतीय क्षेत्र।
34.	वी.एल. अरहर 1	उत्तराखण्ड के पर्वतीय क्षेत्र।
35.	वी.एल. अगेती मटर 7	उत्तराखण्ड के पर्वतीय क्षेत्र, उत्तर प्रदेश के मैदानी भाग एवं बिहार।
36.	विवेक मटर 8	उत्तराखण्ड, हिमाचल प्रदेश एवं जम्मू–कश्मीर।
37.	विवेक मटर 10	उत्तराखण्ड के पर्वतीय क्षेत्रा एवं हिमाचल प्रदेश।
38.	वी.एल. बौनी बीन 1	उत्तराखण्ड, हिमाचल प्रदेश एवं जम्मू–कश्मीर।
39.	वी.एल. गार्लिक 1	उत्तराखण्ड, हिमाचल प्रदेश, जम्मू–कश्मीर, बिहार, उत्तर प्रदेश एवं पंजाब।
40.	वी.एल. लहसुन 2	उत्तराखण्ड, हिमाचल प्रदेश एवं जम्मू–कश्मीर।

तालिका–2 उत्तराखण्ड में प्रचलित प्रजातियां

फसल	प्रजातियां
गेहूँ	वी.एल. गेहूँ 616, वी.एल. गेहूँ 738, वी.एल. गेहूँ 804, वी.एल. गेहूँ 829, वी.एल. गेहूँ 892
जौ	वी.एल. जौ 56
धान	वी.एल धान 206, विवेक धान 154, विवेक धान 62, विवेक धान 82, वी.एल. 85
मक्का	वी.एल. संकुल मक्का 31, विवेक मक्का हाईब्रिड 9, विवेक क्यू.पी.एम. 9, विवेक मक्का हाईब्रिड 15, वी.एल. अम्बर पौपकौर्न, वी.एल. बेबीकार्न 1

मंडुवा	वी.एल. मंडुवा 146, वी.एल. मंडुवा 149, वी.एल. मंडुवा 315, वी.एल. मंडुवा 324
मादिरा	वी.एल. मादिरा 172, वी.एल. मादिरा 207
सब्जी फसल	वी. एल. अगेती मटर 7, विवेक मटर 10, विवेक मटर 11, वी.एल. बौनीबीन 1, वी.एल. प्याज 3, वी.एल. टमाटर 4 दलहन व तिलहनवी.एल. अरहर 1, वी.एल. मसूर 126, वी.एल. मसूर 129, वी.एल. राजमा 63, वी.एल. मटर 42, वी.एल. सोया 47, वी.एल. भट 65
अल्प प्रयुक्त फसल	वी.एल. चुआ 44 एवं वी.एल. उगल 7

उपरांऊ धान वी0एल0 धान 209

संस्थान द्वारा विकसित गेहूँ की एक

विवेक क्यू पी एम 9

वी0 एल0 मंडुवा 315

वी0 एल0 टमाटर 4

वी0 एल0 अरहर 1

संस्थान द्वारा उन्नत प्रजातियों को विकसित करने के लिए स्थानीय जनन द्रव्यों का भी उपयोग किया जाता रहा है। बीज उत्पादन, जैव प्रौद्योगिकी, पादप कार्यिकी, जनन द्रव्य संसाधन, उन्नत सस्य विधि, उन्नत सह फसलें एवं फसल चक्र, मृदा एवं जल प्रबन्ध, रोग एवं कीट प्रबन्ध, चारा एवं चारागाह प्रबन्ध, कृषि सांख्यिकी, कृषि अर्थशास्त्र कटाई–उपरान्त प्रौद्योगिकी एवं तकनीकी हस्तान्तरण के क्षेत्रों में भी संस्थान का बहुमूल्य योगदान रहा है।

संस्थान में आणविक प्रजनन के अन्तर्गत चिह्नक सहायक चयन पद्धति द्वारा किये जा रहे महत्वपूर्ण शोधकार्यों के फलस्वरूप विवेक मेज हाईब्रिड 9 के क्यू. पी.एम. रूप विवेक क्यू.पी.एम. 9 का विकास किया गया है, जिसमें लाइसिन एवं ट्रिप्टोफैन की मात्राा क्रमशः 30 व 40 प्रतिशत अधिक है। यह विवेक मक्का हाईब्रिड 9 से 8.9 प्रतिशत अधिक उपज देती है। संस्थान में जैव प्रौद्योगिकी का उपयोग करके रोग–कीट–रोधी तथा पोषक तत्वों की अधिकता वाली नई किस्मों को विकसित करने के सतत प्रयास किये जा रहे हैं।

जैव प्रौद्योगिकी प्रयोगशाला में कार्यरत

बीजोत्पादन एवं आपूर्ति

संस्थान द्वारा विभिन्न वर्षों में विकसित प्रजातियों के बीज तैयार कर उनके आधारीय एवं प्रमाणित बीज संवर्धन हेतु राज्य बीज निगम, राज्य सरकार के कृषि विभाग एवं अन्य विभागों को आपूर्ति की जाती है। उदाहरणतः वर्ष 2011–12 के दौरान 39 विमोचित/अन्तः प्रजात प्रजातियों का 278.12 कु. जनक बीज उत्पादित किया गया; जिसमें से विभिन्न बीज उत्पादन ऐजेन्सियों को बीज बनाने हेतु 264.81 कुन्तल बीज की आपूर्ति की गयी। इसके अलावा वंशानुगत शुद्धता बनाये रखने के लिये 38 विमोचित प्रजातियों के 22.48 कुन्तल नाभिकीय बीजों का उत्पादन किया गया। इसी दौरान संस्थान की प्रसार गतिविधियों के संचालन हेतु 16 खाद्यान्न फसलों, 4 दलहनी, 3 तिलहनी, 14 सब्जी फसलों, 5 कदन्न एवं अल्प प्रयुक्त फसलों के 62.71 कुन्तल सत्यापित बीजों का उत्पादन भी किया गया। कृषक सहभागिता बीज उत्पादन कार्यक्रम के अन्तर्गत वी.एल. गेहूँ 907 के 32 कुन्तल सत्यापित बीज का उत्पादन बैलपड़ाव (रामनगर) गांव के कृषकों के खेतों पर भी किया गया।

उन्नत उत्पादन तकनीक

विकसित उन्नत प्रजातियों की वर्षा आधारित (उपरॉऊ) एवं सिंचित (तलॉऊ) दोनों ही अवस्थाओं में पर्याप्त उपज प्राप्त करने एवं उसमें टिकाऊपन लाने हेतु समरूप उन्नत सस्य तकनीकों; जैसे– बुवाई का समय, बीज की मात्राा, उर्वरक व खरपतवार नाशकों की मात्रा,

प्रयोगविधि, मृदा एवं जल प्रबन्धन आदि का विकास किया गया है। परम्परागत फसलों के साथ अधिक लाभदायी फसलों को शामिल कर फसल विविधीकरण पर विशेष बल दिया गया है; जिससे अन्तःफसली या फसलों को क्रमबद्ध रूप में उगाने, लगातार मृदा की उत्पादन क्षमता बढ़ाने, उत्पादन लागत कम करने एवं उत्पादन पद्धति को टिकाऊ बनाये रखने में महत्वपूर्ण योगदान मिल सके। गहन शोध के पश्चात अधिक लाभ देने वाली दलहनी, तिलहनी, बेमौसमी सब्जियों को फसल प्रणाली में शामिल करके उन्नत फसल चक्र, अन्तःखेती एवं रिले क्रॉपिंग पद्धतियों का विकास किया गया है।

अन्तः फसली पद्धति

संस्थान में हुए विस्तृत शोध कार्यों के आधार पर यदि शीघ्र पकने वाली उन्नत किस्मों को उन्नत सस्य विधियों द्वारा फसलचक्र के रूप में उगाया जाय तो उपरॉऊ में वर्ष में दो फसलें व तलॉऊ में तीन से चार फसलें ली जा सकती हैं। इस प्रकार स्थानीय फसलचक्र से प्राप्त होने वाले कुल उत्पादन व शुद्ध लाभ को तीन से पॉच गुना तक बढ़ाया जा सकता है। इसके अतिरिक्त उपरॉऊ क्षेत्रों में सिंचाई हेतु कम लागत वाले पौलीथीन टैंकों को विकसित किया गया है; जिसमें वर्षा–जल तथा नौले आदि से बहने वाले जल का संग्रह कर आवश्यकतानुसार प्रयोग किया जा सकता है। जल स्रोतों के उपयोग तथा पौली हाउस तकनीक द्वारा बेमौसमी सब्जी उत्पादन कर पर्वतीय कृषक प्रति वर्ष अच्छी आय अर्जित कर सकते हैं।

फसल सुरक्षा

संस्थान द्वारा पर्वतीय क्षेत्रों में विभिन्न फसलों एवं सब्जियों में लगने वाले रोगों एवं कीटों की पहचान कर इनकी रोकथाम के लिये सस्ती एवं प्रभावशाली विधियाँ विकसित की गयी हैं। सूक्ष्म जीवों पर किये जा रहे शोध के फलस्वरूप फसल वृद्धि, रोग–कीटों के नियंत्राण में भी सफलता मिली है। फसलों की कुछ प्रमुख कीट रोधी एवं रोग रोधी दाता किस्मों की पहचान करके उन्हें नई प्रजातियों को विकसित करने में प्रयोग किया गया है। पर्वतीय क्षेत्रा की फसलों को सबसे अधिक हानि पहुँचाने वाले कुरमुला कीट (एनोमेला डिमिडिएटा) की रोकथाम के लिये किये गये प्रयासों में जैव कीटनाशी तथा संस्थान द्वारा विकसित सस्ते 'कीट प्रकाश प्रपंच' काफी उपयोगी सिद्ध हुए हैं। कुरमुला कीट के प्रबन्धन के लिये कीट के रोग जनक एवं कीट–प्रपंचों के प्रविस्तारण परियोजना के अन्तर्गत उत्तराखंड के विभिन्न स्थानों पर किसानों के खेतों में बैसिलस सिरिअस से निर्मित दवा एवं प्रकाश प्रपंचों को स्थापित करने पर कुरमुला से होने वाली हानि रोकने में सन्तोषजनक सफलता मिली। इस कीट को नियंत्रित करने की यह एक सफल तकनीक है। कश्मीर के फलोद्यानों में भी यह लाभकारी सिद्ध हुई। संस्थान द्वारा कुरमुला के नियंत्राण हेतु विकसित उपर्युक्त तकनीकों को एनआरडीसी का ''सामाजिक नवाचार पुरस्कार (सोसाइटल इनोवेशन एवार्ड) – 2008'' प्राप्त हुआ है। इसी अनुसंधान को वर्ष 2008 के सर्वश्रेष्ठ अनुसंधान के लिये 2009 में ''वाइपो गोल्ड मेडल'' भी प्राप्त हुआ। फसलों को जंगली जानवरों से सुरक्षित रखने के उद्देश्य से संस्थान ने एक सुरक्षा यंत्रा वी.एल. वार (वी.एल. वाइल्ड एनिमल रेपेलेन्ट) विकसित किया है; जिसका बीच–बीच में प्रयोग करके किसानों को जंगली जानवरों से होने वाले नुकसान से कुछ सीमा तक राहत मिल सकती है; हालांकि इनसे बचाव के लिए अनेक स्तरों से अभी काफी प्रयास करने की जरूरत है।

प्रकाश प्रपंच

उन्नत कृषि यन्त्र

पर्वतीय क्षेत्रों में कृषकों; विशेषकर कृषक महिलाओं के शारीरिक श्रम को कम करने के उद्देश्य से संस्थान द्वारा विवेक मंडुवा/मादिरा थ्रेशर, पैर चालित धान थ्रेशर, गेहूँ व मसूर की पंक्तिबद्ध बुवाई हेतु हल्के सीड ड्रिल आदि उन्नत कृषि यन्त्रों को विकसित किया गया है, जो पर्वतीय कृषकों के बीच काफी लोकप्रिय हो रहे हैं। ये यंत्रा कृषकों को मांग के आधार पर उपलब्ध कराये जाते हैं। संस्थान द्वारा विकसित मंडुवा/मादिरा थ्रेशर को एनआरडीसी का 'मेरीटोरियस इन्वेन्शन अवार्ड 2006' प्राप्त हुआ है। पर्वतीय क्षेत्रों में वृक्षों के कटान को रोकने एवं पर्यावरण सुरक्षा बनाये रखने के उद्देश्य से संस्थान द्वारा 'वी.एल. स्याही हल' का विकास किया गया है। विभिन्न विभागों एवं कृषकों को अच्छी गुणवत्ता के वांछित उपकरण समय पर मिल सकें, इसके लिये संस्थान ने मंडुवा/मादिरा थ्रेशर, पैडी थ्रेशर सीड–कम–फर्टि–ड्रिल तथा वी.एल. स्याही हल को बनाने एवं विक्रय करने हेतु निजी कम्पनियों के साथ अनुबंध किया है।

धान थ्रेशर की प्रयोगविधि

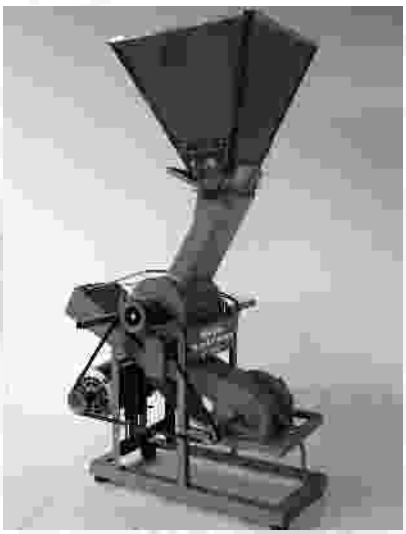

विवेक मंडुवा–

चारा एवं चारागाह प्रबन्ध

संस्थान द्वारा कृषि के लिए अनुपयुक्त भूमि; जैसे– ऊसर अथवा तीव्र ढलान वाली भूमि पर चारा उत्पादन तकनीक विकसित की गयी है। चारे की अधिक उपज देने वाली घास की अनेक नई किस्में; जैसे– हाईब्रिड नेपियर, ओंस, कांगोसिगनल घास, पंगोला रोड्स, सिटेरिया काजुन्गुला तथा डेसमोडियम आदि चयनित की गई हैं। उपयुक्त कृषि वानिकी पद्धतियों के विकास के अन्तर्गत चीड़ एवं देवदार के नीचे उगने वाली हाइब्रिड नेपियर, पंगोला एवं ओंस आदि घासों की पहचान की गयी है। जाड़ों में हरे चारे की कमी को दूर करने में द्विउद्देशीय गेहूँ की किस्मों (वी.एल. गेहूँ 616 एवं वी.एल. गेहूँ 829) ने बहुत अच्छे परिणाम दिये हैं; जिनसे किसान जाड़ों में हरा चारा तथा बाद में उसी फसल से गेहूँ; दोनों प्राप्त कर सकते हैं, जिन्हें किसानों द्वारा अत्यधिक सराहा गया है।

चीड़ के नीचे हाइब्रिड नेपियर

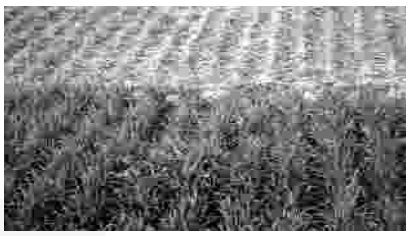

गेहूँ की द्विउद्देशीय किस्म
वी0 एल0 829 चारा एवं दाना

अन्य महत्वपूर्ण क्रियाकलाप

प्रसार– उत्तर–पश्चिमी हिमालयी क्षेत्रों के कृषकों, प्रसार कार्यकर्ताओं, शोधार्थियों तथा कृषि कार्य में संलग्न कार्यकर्ताओं को संस्थान द्वारा विभिन्न प्रशिक्षण कार्यक्रमों, किसान मेलों, अग्रिम पंक्ति प्रदर्शनों तथा प्रकाशनों द्वारा विकसित तकनीकियों का प्रसार किया जाता है। चयनित गॉवों में अब तक 150 से अधिक पौलीहाउस व एलडीपीई टैंकों का निर्माण किया गया है। संस्थान द्वारा अल्मोड़ा व नैनीताल जनपदों के भगरतोला, ढिंगरीगूँठ, दूनागिरी और दाड़िम गॉवों में किसान क्लबों तथा स्वयं सहायता समूहों का गठन किया गया। कृषि शोध में हुई उपलब्धियों का प्रचार–प्रसार करने के उद्देश्य से संस्थान द्वारा दो कृषि विज्ञान केन्द्रों (एक उत्तरकाशी एवं दूसरा बागेश्वर में) की स्थापना की गयी है। ये कृषि विज्ञान केन्द्र शोध व प्रसार में सामंजस्य बनाते हुए कृषकों को उचित मार्गदर्शन देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं।

पौली

पौली

किसानों को घर बैठे–बैठे कृषि सम्बन्धी जानकारी उपलब्ध कराने के उद्देश्य से यहां के वैज्ञानिकों एवं तकनीशियनों द्वारा समय–समय पर आकाशवाणी अल्मोड़ा से रेडियो वार्ताएं प्रसारित की जाती हैं। इसमें अधिक गुणवत्ता लाने के उद्देश्य से जुलाई 2009 से प्रत्येक रविवार को सायं 6 बजे कृषि समृद्धि कार्यक्रम का नियमित प्रसारण किया जाता है। इस कार्यक्रम के माध्यम से कृषक घर बैठे ही अपनी समस्याओं का निराकरण प्राप्त कर रहे हैं। इसके अलावा संस्थान के निःशुल्क दूरभाष संख्या 1800–180–2311 पर सम्पर्क कर कृषक प्रत्येक कार्य दिवस को तक अपनी कृषि सम्बन्धी समस्याओं का निराकरण कर सकते हैं।

अग्रिम पंक्ति प्रदर्शन

कृषकों को नई उन्नत प्रजातियों की उपज क्षमता से परिचित कराने हेतु संस्थान उन्हीं के खेतों में विभिन्न फसलों में अग्रिम पंक्ति प्रदर्शन कार्यक्रम भी चलाता है। विगत वर्ष 2011–12 में संस्थान द्वारा अल्मोड़ा और बागेश्वर जिलों के 20 गांवों के 135 किसानों के लिये 9.82 हैक्टेयर भूमि पर धान के अग्रिम पंक्ति प्रदर्शन लगाये गये। इसके अलावा उत्तराखण्ड के विभिन्न गांवों में 14, 2.66, 3.5, 2 हैक्टेयर भूमि पर गेहूँ, गहत, अरहर तथा सोयाबीन के अग्रिम पंक्ति प्रदर्शन लगाकर संस्थान ने उपज वृद्धि की दिशा में उल्लेखनीय प्रयास किया। संस्थान के 2 कृषि विज्ञान केन्द्र (उत्तरकाशी एवं बागेश्वर) भी आस–पास के गांवों में अग्रिम पंक्ति प्रदर्शन कार्यक्रमों के माध्यम से कृषकों को लाभान्वित कर रहे हैं। 2012–13 में दलहनी फसलों में ही लगभग 2500 किग्रा. गुणवत्तायुक्त उन्नत किस्मों को उत्तराखण्ड में किसानों के खेतों में लगाया गया है। इसी क्रम में विगत वर्ष कृषि विज्ञान केन्द्र उत्तरकाशी द्वारा 35.6 हैक्टेयर भूमि में अग्रिम पंक्ति प्रदर्शन लगाकर 711 किसानों तथा कृषि विज्ञान केन्द्र बागेश्वर द्वारा 47.67 हैक्टेयर भूमि में अग्रिम पंक्ति प्रदर्शन लगाकर 1,933 कृषकों को लाभान्वित किया गया। इससे विभिन्न फसलों में क्रमशः 19–80, 8–66 प्रतिशत की वृद्धि देखी गयी।

प्रशिक्षण

कृषि से सम्बन्धित भिन्न–भिन्न विषयों पर प्रशिक्षण कार्यक्रमों के आयोजन द्वारा

संस्थान विभिन्न कृषि विभागों, कृषकों और प्रसार कार्यकर्ताओं आदि को प्रशिक्षित करता रहता है। इसी क्रम में विगत वर्ष राज्य सरकार के अधिकारियों, राज्य सरकार, एन जी ओ, सशस्त्र सेना बल आदि के माध्यम से आये किसानों को पर्वतीय कृषि के विभिन्न आयामों; जैसे जैविक खेती, बीज उत्पादन, बेमौसमी सब्जी उत्पादन, मशरूम की खेती, पर्वतीय कृषि में प्लास्टिक का उपयोग आदि विषयों पर प्रशिक्षण दिया गया; जिससे 1,870 व्यक्ति लाभान्वित हुए। संस्थान के कृषि विज्ञान केन्द्र उत्तरकाशी एवं बागेश्वर द्वारा क्रमशः 93 एवं 88 प्रशिक्षण कार्यक्रमों के माध्यम से 2,313 एवं 1,910 अभ्यासरत किसानों, कृषक महिलाओं, ग्रामीण युवकों तथा प्रसार कार्यकर्ताओं को कृषि के विभिन्न आयामों; जैसे फसल उत्पादन, औद्यानिकी, पौध सुरक्षा, पशु विज्ञान, कृषि प्रसार, गृह विज्ञान आदि विषयों पर प्रशिक्षित किया गया। उत्तराखंड के साथ ही जम्मू–काश्मीर, हिमाचल प्रदेश एवं सिक्किम के विभिन्न गॉवों से आये हुए कृषकों को भी संस्थान द्वारा समय–समय पर प्रशिक्षित किया गया है।

के.वी.के. बागेश्वर में

पैडी थ्रैशर की जानकारी

किसान मेले

संस्थान प्रत्येक वर्ष अपने हवालबाग प्रक्षेत्रा में 2 बार (रबी एवं खरीफ) किसान मेलों का आयोजन करता है; जिसमें विभिन्न कृषि विभागों, संस्थानों, कम्पनियों तथा गैर सरकारी संगठनों के कृषि तकनीकी से सम्बन्धित स्टॉल लगाये जाते हैं; जिसमें स्थानीय कृषक बड़ी संख्या में भागीदारी करते हैं और लाभान्वित होते हैं। विगत वर्ष 2011 में यह मेले 29 मार्च व 24 सितम्बर एवं 2012 में 24 मार्च को आयोजित किये गये; जिनमें प्रत्येक मेले में 800 से अधिक कृषकों ने भागीदारी की। इस दौरान सीमावर्ती क्षेत्र के किसानों ने भी संस्थान की विभिन्न तकनीकियों की जानकारी ली। मार्च 17 व 18, 2012 को पिथौरागढ़ जिले के सीमान्त क्षेत्रों; धारचूला व मुनस्यारी में भी किसान मेलों का आयोजन कर वहां के कृषकों को संस्थान की तकनीकियों से अवगत कराया गया।

प्रक्षेत्रा भ्रमण के दौरान माननीय मंत्री,

संचालित परियोजनाएं

संस्थान द्वारा अपने उपर्युक्त कार्यक्रमों के अलावा कुछ अन्य परियोजनाएं; नामतः उत्तर–पूर्वी एवं हिमालयी राज्यों हेतु औद्यानिकी मिशन, डी0बी0टी0, राष्ट्रीय कृषि नवोन्मेषी परियोजना, अखिल भारतीय समन्वित शोध परियोजना, केन्द्रीय जल आयोग परियोजना एवं कुछ अन्य परियोजनायें भी संचालित की जा रही हैं। संस्थान में 2007 से राष्ट्रीय कृषि नवोन्मेषी परियोजना भी चल रही है। इस परियोजना के अन्तर्गत जम्मू एवं कश्मीर, हिमाचल प्रदेश तथा उत्तराखण्ड के पाँच जनपदों (कुपवाड़ा, डोडा, चम्बा, टिहरी गढ़वाल तथा चम्पावत) में कार्यक्षेत्र (क्लस्टर) चुने गये है। इनमें कृषि उत्पादकता में वृद्धि, आधारभूत प्राकृतिक संसाधनों का प्रबन्धन, कृषि प्रसंस्करण, बेहतर विपणन द्वारा आजीविका के अन्य अवसरों का सृजन, उद्यमिता विकास तथा रोजगार सृजन के लिए कार्य किया जा रहा है। संस्थान द्वारा उत्तराखण्ड के विभिन्न केन्द्रों में संचालित औद्यानिकी मिशन (एम एम 1) परियोजना के अन्तर्गत 2004 से 2011 तक विभिन्न सब्जी फसलों के 1,114.25 किग्रा. बीज का उत्पादन किया गया तथा 71 प्रशिक्षण कार्यक्रम/प्रक्षेत्रा दिवस/प्रक्षेत्र स्कूल के आयोजन द्वारा 1,700 भागीदारों को लाभान्वित किया गया। पॉच गांवों में प्रकाश प्रपंच तथा जैव कीटनाशी के प्रयोग द्वारा कुरमुला कीट की संख्या में 80 प्रतिशत से अधिक की कमी आयी है। उच्च उपज वाली प्रजातियों के प्रयोग द्वारा उपज में 25 से 38 प्रतिशत की वृद्धि पायी गयी; जिसके फलस्वरूप किसानों को अधिशेष उपज के विक्रय से रूपया 13,870/– से रूपया 18,650/– की आय हुई। धान थ्रेशर का वजन 42 किग्रा. से कम कर 25 किग्रा. किया गया। इसकी गहाई क्षमता 80–100 किग्रा./घण्टा तथा दक्षता 98 प्रतिशत है। केन्द्रीय जल आयोग की परियोजना के अन्तर्गत 50 से अधिक पौली फिल्म लाईन टैंकों का निर्माण किया गया।

कृषि कैलेंडर का विमोचन करते

प्रकाशन

संस्थान द्वारा विकसित तकनीकों को कृषकों तक पहुँचाने के उद्देश्य से संस्थान कृषि कैलेन्डर, विभिन्न फसलों की उत्पादन–तकनीकों पर आधारित प्रसार–प्रपत्रों एवं प्रसार–पुस्तिकाओं का प्रकाशन करता है जिनमें कृषि क्रिया–कलापों का विवरण दिया जाता है। ये प्रसार–प्रपत्रा कृषकों को निःशुल्क वितरित किये जाते हैं। संस्थान द्वारा प्रकाशित पुस्तिका 'उत्तर–पश्चिमी पर्वतीय क्षेत्रों में कृषि उत्पादन की वृद्धि के लिये उन्नत तकनीकें' एवं 'उत्तर–पश्चिमी पर्वतीय क्षेत्रों में प्रमुख सब्जियों की उन्नत खेती' कृषकों में काफी लोकप्रिय है। इनमें पर्वतीय फसलों और सब्जी–फसलों की उत्पादन एवं सुरक्षा विषयक तकनीकें व अन्य जानकारियॉ दी गयी हैं। संस्थान पर्वतीय क्षेत्रों में फसल क्रम के अनुरूप कृषि कैलेंडर भी तैयार

करता है। ये कृषि–प्रसार में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही हैं।

तकनीक व्यवसायीकरण

संस्थान द्वारा विकसित प्रजातियों एवं तकनीकियों से अधिकाधिक लोगों को लाभान्वित करने के उद्देश्य से इनका व्यवसायीकरण किया जाता है। इसी क्रम में मक्का की अधिक प्रोटीनयुक्त प्रजाति विवेक क्यू.पी.एम. 9 के बीज बनाने हेतु 3 निजी कम्पनियों के साथ अनुबन्ध किया गया। इसके अलावा संस्थान द्वारा विकसित यंत्रों; नामतः विवेक थ्रेशर 1, वी.एल. धान थ्रेशर, वी.एल. इनसैक्ट ट्रैप, वी.एल. स्याही हल तथा अन्य छोटे यंत्रों के व्यवसायीकरण हेतु विभिन्न कम्पनियों के साथ अनुबन्ध किया गया। शोध एवं प्रसार गतिविधियों में बेहतर सहभागिता हेतु संस्थान ने चौधरी श्रवण कुमार हिमाचल प्रदेश कृषि विश्व विद्यालय, पालमपुर, हिमाचल प्रदेश के साथ भी अनुबन्ध किया है।

अनुबन्ध हस्ताक्षर करते संस्थान

गोष्ठियों का आयोजन

संस्थान में प्रायः क्षेत्रीय, राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय संगोष्ठियाँ भी आयोजित होती हैं; जिनमें से अखिल भारतीय कदन्न कार्यशाला, मक्का कार्यशाला, मरु–दलहन कार्यशाला, अन्तर्राष्ट्रीय धान अनुसंधान गोष्ठी उल्लेखनीय हैं। वर्ष 2011 में उत्तराखण्ड विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी काँग्रेस (यूकास्ट) का कृषि विकास विषयक 'ब्रेन स्टौरमिंग' सत्रा इसी संस्थान में आयोजित किया गया; जिसमें देश के प्रसिद्ध कृषि वैज्ञानिकों ने प्रतिभागिता की। इस सत्रा की अध्यक्षता भा0कृ0अनु0प0 के पूर्व महानिदेशक तथा सम्प्रति बिहार सरकार के मुख्य कृषि सलाहकार डॉ0 मंगला राय ने की।

संस्थान में आयोजित शोध सलाहकार समिति की

यूकास्ट कांग्रेस के विचार–मंथन सत्रा में

महत्वपूर्ण अन्वेषण

संस्थान ने अपने 88 वर्ष के कार्यकाल के दौरान कई महत्वपूर्ण अन्वेषण किये हैं; जिनमें से मुख्य इस प्रकार हैं:–

- भारत की पहली संकर मक्का (वी. एल. मक्का 54), प्याज (वी.एल. प्याज 67) एवं विभिन्न फसलों में शीघ्र तैयार होने वाली प्रजातियों का विकास।
- द्विउद्देशीय (दाना एवं चारा) गेहूँ की प्रजातियों (वी.एल. गेहूँ 616 एवं वी एल गेहूँ 829) का विकास।
- आणविक चिह्नित सहायक चयन द्वारा सामान्य मक्का का गुणवत्ता युक्त प्रोटीन वाला मक्का (विवेक क्यू.पी.एम 9) में रूपान्तरण।
- मडुवा एवं मादिरा कुटाई हेतु 'विवेक थ्रैसर–कम–पर्लर' एवं धान के लिए 'पैडी थ्रैसर' का विकास; जो पर्वतीय महिलाओं के श्रम व थकान को कम करने में सहायक है।
- कुरमुला कीट के वयस्क एवं गिडारों के नियन्त्राण हेतु तकनीकी का विकास।
- चीड़ के नीचे लगने वाली घासों की पहचान।
- पर्यावरण सुरक्षा की दृष्टि से उपयोगी 'वी.एल. स्याही हल' व छोटे यंत्रों का विकास।

सम्मान एवं पुरस्कार

संस्थान को अब तक अनेक सम्मानों एवं पुरस्कारों से सम्मानित किया जा चुका है; जिनमें से कुछ प्रमुख पुरस्कार एवं सम्मान इस प्रकार हैं–

- दो बार (2000 तथा 2007) भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् का सरदार पटेल सर्वश्रेष्ठ संस्थान पुरस्कार।
- उत्तर पश्चिमी हिमालयी क्षेत्रा में गेहूँ–धान की किस्मों तथा उन्नत तकनीकों का उपयोग कर अधिक उत्पादन प्राप्त करने हेतु संस्थान के वैज्ञानिकों को भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का टीम एवार्ड (2005–06)।
- उत्तर–पश्चिमी हिमालय में सफेद गिडार के प्रबन्धन हेतु पर्यावरण सम्मत नवीन प्रोद्यौगिकी विकसित करने के लिये एनआरडीसी का 'सामाजिक नवाचार पुरस्कार (सोसाइटल इनोवेशन एवार्ड)–2008' तथा वर्ष 2009 में 'वाइपो गोल्ड मेडल' अर्न्राष्ट्रीय पुरस्कार।
- संस्थान द्वारा विकसित मंडुवा/मादिरा थ्रेशर को एनआरडीसी का 'मेरीटोरियस इन्वेन्शन अवार्ड 2006'।
- प्राकृतिक संसाधन प्रबन्धन (मृदा विज्ञान, सस्य विज्ञान, कृषि वानिकी) में उत्कृष्ट शोध कार्य हेतु वैज्ञानिकों को भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का टीम एवार्ड (2007–08)।
- संस्थान में दीर्घ काल तक उर्वरता प्रबन्धन बनाये रखने हेतु 1973 से किये जा रहे अध्ययन से पता चलता है कि संस्तुत रासायनिक उर्वरक के साथ गोबर की खाद 10 टन प्रति हैक्टेयर की दर से देने पर विभिन्न फसलों की पोषण सम्बन्धी समस्या के निराकरण के साथ ही मृदा की भौतिक अवस्था को भी बचाया जा सकता है। संस्थान के इस अनुसंधान के लिए 1988 में इसे कृभको बारानी खेती के प्रथम पुरस्कार से सम्मानित किया गया।
- 'धान के रोग' तथा 'उत्तर–पश्चिमी पर्वतीय क्षेत्रों में कृषि उत्पादकता की वृद्धि' के लिये उन्नत तकनीकें' नामक पुस्तकों को भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का डा. राजेन्द्र प्रसाद पुरस्कार।

- कृषि तकनीकों के विकास एवं प्रसार में उत्कृष्ट योगदान हेतु महेंद्रा समृद्धि इंडिया एग्री अवार्ड 2012 के अन्तर्गत कृषि संस्थान सम्मान।

वर्ष 2011 में संस्थान के परिवार से सम्बद्ध डॉ. दिवा भट्ट ने भा0कृ0अनु0प0 के शीर्षगीत (ICAR Song) की रचना की; जिसे 16 जुलाई, 2011 को परिषद के स्थापना दिवस के अवसर पर नास्क कोंप्लेक्स, नई दिल्ली में प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह की उपस्थिति में विमोचित किया गया। यह गीत अब परिषद के समस्त संस्थानों एवं केन्द्रों में प्रत्येक महत्वपूर्ण कार्यक्रम के प्रारम्भ में बजाया जाता है।

संस्थान के निदेशक

अपने जीवन काल में डॉ. बोशी सेन इसके संस्थापक निदेशक बने रहे। 1971 में उनके देहावसान के पश्चात् जिन वैज्ञानिकों के कुशल निर्देशन में अनुसंधान का कार्य आगे बढ़ा, उनके नाम क्रमशः इस प्रकार हैं: डॉ. एच. के. सक्सेना (सितम्बर 1971–मार्च 1972), श्री एच. सी. जोशी (कार्यवाहक; मार्च से सितम्बर 1972), डॉ. जे. पी. टण्डन (सितम्बर 1972 – जून 1983), श्री एच. सी. जोशी (का0; जून 1983 – नवम्बर 1984), डॉ. के. डी. कोरान्ने (नवम्बर1984 – फरवरी 1995), डॉ. एस. डी. दुबे (का0; फरवरी 1995 – सितम्बर 1996), डॉ. वी. एस. चौहान (सितम्बर 1996 – अप्रैल 1999), डॉ. वी. पी. मनी (का0; अप्रैल 1999 – फरवरी 2000), डॉ. एच. एस. गुप्त (फरवरी 2000 – मार्च 2009), डॉ. ए. के. श्रीवास्तव (का0; अप्रैल 2009 – सितम्बर 2009), डॉ. जे. सी. भट्ट (सितम्बर 2009 से अब तक)।

संस्थान के संदर्भ में कतिपय विशिष्ट प्रतिक्रियाएं

संस्थान की उन्नति के दौरान बहुत से महानुभावों; जिनमें ख्याति प्राप्त वैज्ञानिक, सांसद, शिक्षाविद् एवं प्रशासक मुख्य हैं; द्वारा संस्थान का समय–समय पर भ्रमण किया गया। उनके द्वारा संस्थान की शोध उपलब्धियों पर की गयी टिप्पणियों में से कुछ महत्वपूर्ण टिप्पणियां इस प्रकार हैं–

1974 में संस्थान के भ्रमण के दौरान नोबेल पुरस्कार विजेता डा. नारमन ई. बोरलॉग ने संस्थान के बारे में अपने विचार व्यक्त करते हुए लिखाः 'मुझे आपके रूचिकर कृषि संस्थान का दुबारा भ्रमण करते हुए अत्यन्त खुशी हो रही है। आपका संस्थान पर्वतीय लोगों के जीवन के स्तर को सुधारने हेतु अत्यन्त महत्वपूर्ण कार्य कर रहा है– अपने अच्छे कार्य को ऐसे ही बनाये रखें।'

1974 में भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के महानिदेशक डा. एम. एस. स्वामीनाथन की राय थी कि 'विवेकानन्द लैबोरेटरी प्रकृति को समझने और इसके साथ पारिस्थितिकी को बिना नुकसान पहुंचाये लाभ लेने हेतु वैज्ञानिकों के संकल्प का एक जीता जागता स्मारक है। स्वर्गीय डा. बोशी सेन वैज्ञानिक समर्पण का एक प्रतीक थे। उन्होंने हमें बताया कि विज्ञान में जड़–चेतन एवं आज और कल को कैसे सम्मिलित किया जाय। संकर प्रजातियों का विचार भी उन्हीं की देन है।'

1982 के दौरान भारत की प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी ने संस्थान के अच्छे कार्यों हेतु बधाई देते हुए लिखा कि 'स्वामी विवेकानन्द जी और डा. बोशी सेन जी द्वारा चलाये जा रहे इस कल्याणकारी कार्य को आगे भी बनाये रखें।'

1988 में श्री अटल बिहारी बाजपेयी ने लिखा हैः 'स्वामी विवेकानन्द के दिव्य जीवन से प्रेरणा लेकर डॉ. सेन ने जिस प्रकल्प का शुभारम्भ किया था वह अब पर्वतीय क्षेत्रा में कृषि को नये बीज, किस्म की उपज, कीटनाशक, जल संरक्षण आदि में विविध तरीकों से उन्नत तथा विज्ञान परक बनाने में महत्वपूर्ण योगदान दे रहा है। पर्वतीय क्षेत्रों की विशेष समस्याओं को ध्यान में रखकर वैज्ञानिक यहाँ जो अनुसंधान कार्य कर रहे हैं उसे किसान तक पहुँचाना शासन का दायित्व है। वैज्ञानिकों के आवास, उनके बच्चों के शिक्षण आदि की समुचित व्यवस्था भी आवश्यक है।'

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के वर्तमान महानिदेशक डा. एस. अय्यपन ने स्वामी जी के आशीर्वाद हेतु प्रार्थना करते हुए लिखा– 'सन् 2011 के प्रथम दिन स्वर्गीय डा. सेन द्वारा स्थापित विवेकानन्द पर्वतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, अल्मोड़ा में आकर स्वामी विवेकानन्द जी की मूर्ति का अनावरण करना मेरे लिये अपने जीवन का एक अविस्मरणीय अनुभव है। यहां पर 'बीज से बाजार तक' के बृहद उद्देशीय और प्रेरणास्पद जो विविध कार्य हो रहे हैं, वे अति प्रशंसनीय हैं। विवेकानन्द संस्थान भारत की पर्वतीय कृषि का एक केन्द्र बिन्दु है।'

निदेशक

स्वामी विवेकानन्द जी की मूर्ति का माल्यार्पण करते भा0कृ0अनु0प0 के महानिदेशक

आइवर यूशिएल

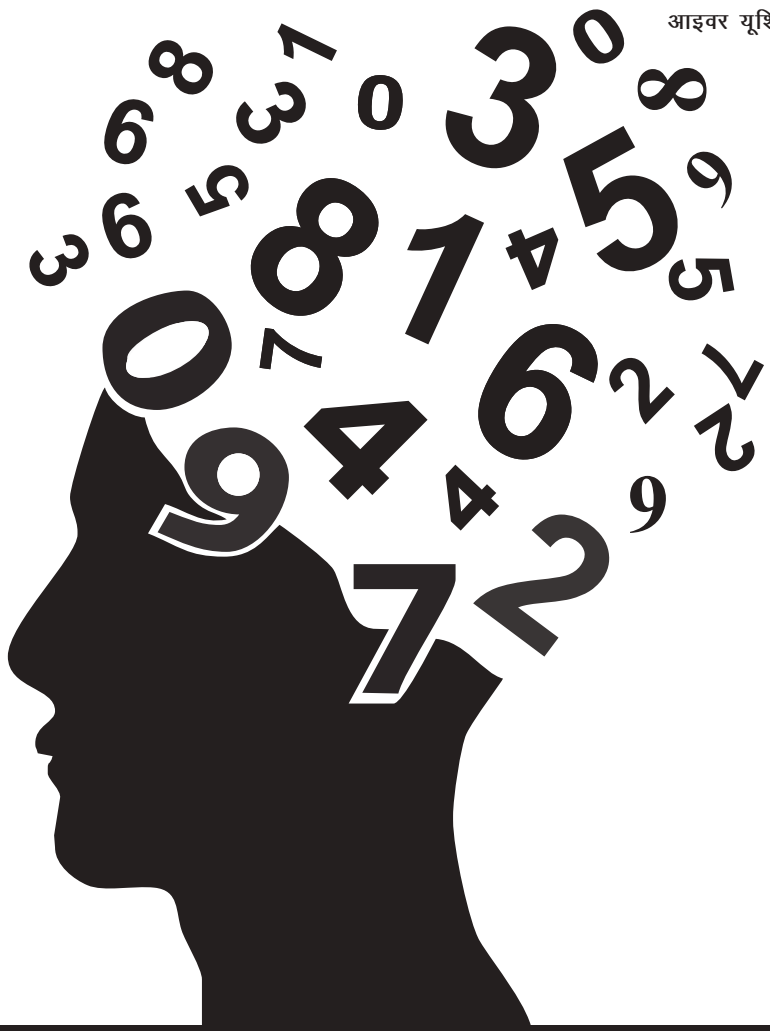

कितनी मुद्राएं?

गणित की उपेक्षा से उपजी एक व्यथा-कथा

जीवन में गणित के महत्व को दर्शाती एक ऐसी कथा यहाँ प्रस्तुत है जो यह सिद्ध करती है कि गणित सिर्फ विषय ही नहीं है, यह हमारी रोजमर्रा की जिन्दगी का एक ऐसा अंग है, जिसे केवल कुछ पल के लिए भी अलग कर पाना संभव नहीं है। आम जन की बात तो दूर, एक बेहद सामर्थ्यवान व्यक्ति द्वारा भी इसके प्रति बरती गई उपेक्षा उसके अपने लिए ही कितनी हानि एवं अपमान का कारण बन गई....

बहुत पुराने समय की बात है जब रोमन साम्राज्य का अपने एक पड़ोसी राज्य के साथ सीमा सम्बन्धी विवाद खड़ा हो गया। नौबत यहाँ तक पहुँच गई कि रोमन सम्राट को इस विवाद का हल निकालने के लिए पड़ोसी राज्य पर आक्रमण का निर्णय लेना पड़ा। आदेशानुसार सेनापति के नेतृत्व में भारी संख्या में सैनिकों ने युद्ध के लिए प्रस्थान कर दिया।

जैसा कि स्वाभाविक था, दोनों सेनाओं के बीच घोर युद्ध हुआ और अंत में रोमन सेनापति की कुशल रणनीति की वजह से दुश्मन को मुँह की खानी पड़ी। बस, फिर क्या था, जीत का जश्न मनाती पूरी सेना प्रसन्नता के साथ जब स्वदेश लौटी तो भरे दरबार में सम्राट ने स्वयं उठ कर सेनापति का स्वागत किया और सिर्फ स्वागत ही नहीं किया बल्कि उसे बेशकीमती उपहार प्रदान करते हुए उसका पद एवं सुविधाएँ दोनों बढाने की घोषणा भी की। परन्तु इसके बाद जब सम्राट ने सेनापति से पूछा कि वह इस सबसे संतुष्ट तो है न, तो सेनापति के उत्तर ने उसे संकट में डाल दिया। सेनापति ने पहले तो राजा द्वारा की गई घोषणा और उनके द्वारा दिये सम्मान के प्रति आभार व्यक्त किया और फिर विनम्रता के साथ अपनी इच्छा दर्शाते हुए निवेदन किया कि वह अब राष्ट्र की और सेवा कर पाने लायक उम्र को पार कर चुका है तथा युद्ध और दूसरे वीरतापूर्ण कार्य करते-करते थक गया है। उसकी चाहत है कि महाराज अब उसे इन पुरस्कारों और सम्मानों के बदले इतनी नकद राशि दे दें ताकि उसे लेकर वह किसी एकांत-शांत जगह आराम से अपनी बाकी बची जिन्दगी बिता सके। सम्राट के पूछने पर सेनापति ने इस नकद राशि की चाहत दस लाख डिनैरी के रूप में अभिव्यक्त की।

रोमन साम्राज्य उस समय चाहे जितना विकसित एवं वैभवशाली रहा हो और सम्राट चाहे कितना भी शक्तिशाली परन्तु उसके बारे में कहा यह जाता था कि किसी राजा के दिल में विशालता का जो

गुण होना चाहिए, वह उसमें नहीं था। राज्यकोष में अकूत सम्पदा थी और सम्राट यह भी जानता था कि सेनापति ने अपनी उम्र का सारा महत्वपूर्ण भाग देश की सेवा में पूरी तरह लगा दिया था पर उसके बदले में सेनापति द्वारा जिस धनराशि की अपेक्षा की जा रही थी, उसे खजाने से निकलवाना सम्राट के लिए कोई आसान निर्णय नहीं था। एक बहुत बड़ा धर्म संकट उसके समक्ष था जिससे उबरने के लिए उसे कोई युक्ति सोचनी थी ताकि सांप भी मर जाए और लाठी भी न टूटे। दूसरे दिन निर्णय की घोषणा किये जाने का आश्वासन देते हुए सम्राट ने दरबार की कार्यवाही स्थगित कर दी।

अगले दिन यथा समय दरबार लगा। सबको ही यह जानने की उत्सुकता थी कि देखें, सम्राट ने क्या निर्णय लिया? आखिर वह क्षण भी आया जब रोम के महाप्रतापी सम्राट ने भरे दरबार में घोषणा की कि अपने सेनापति की अब तक की गई सेवाओं से हम जितने सन्तुष्ट हैं, उतने ही प्रसन्न भी। इन्होंने अब तक राष्ट्र के लिए जो सेवाऐं दी हैं उनके बदले में हमारी ओर से किसी एक निश्चित राशि की घोषणा कर देना, हमें न्यायसंगत नहीं लग रहा है। इस महान योद्धा ने अपने पूरे कार्यकाल में अपने बाहुबल और बुद्धिकौशल से ही अपने लिए धन व यश कमाया है अतः इस स्वाभिमानी योद्धा के अनुरोध की संवेदनशीलता को देखते हुए हमने बिल्कुल अलग तरह का फैसला किया है।

रोमन सम्राट ने फिर पूरे दरबार पर एक सरसरी नजर डालते हुए बताया कि उन्होंने जो फैसला लिया है उससे सेनापति जैसे स्वाभिमानी इंसान के आत्मसम्मान एवं उनकी गरिमा पर जरा सी भी आंच नहीं आएगी और चूंकि इस तरीके द्वारा इस सेनानायक को मिलने वाली राशि उसकी अपनी ही सामर्थ्य एवं शक्ति पर आधारित होगी अतः हमारा फैसला पूरी तरह ही न्यायसंगत ठहराया जाएगा। इसके बाद सम्राट ने सेनापति की तरफ मुड़कर पूछा कि क्या फैसला सुनने के लिए वे तैयार है और सेनापति के हामी भरने पर उन्होंने निर्णय सुनाना शूरू कर दिया।

राजकोष में इस समय सिर्फ पीतल की ही पचास लाख मुद्राऐ है जिनका मूल्य दस लाख डिनैरी (डिनैरियस रोमन साम्राज्य के समय प्रचलित एक रजत मुद्रा) के बराबर है यानि ठीक वही रकम जो सेनापति पुरस्कार स्वरूप पाना चाह रहे हैं। वे ये सारी मुद्राऐं ले जा सकते हैं। शर्त सिर्फ इतनी है कि पहले दिन सिर्फ एक, दूसरे दिन उसकी दुगनी यानि दो, तीसरे दिन इसकी दुगनी यानि चार और इस तरह हर बार पिछले दिन की तुलना में उन्हें दुगने वजन की मुद्राएं ले जानी होंगी और वह भी स्वयं अपने आप,

बिना कोई बाहरी मदद लिए। सेनापति को हर रोज निश्चित वजन की सिर्फ एक मुद्रा ही उठानी होंगी, उन सबको राज्य की टकसाल में ढालकर एक बड़ी मुद्रा में पहले से ही रूपान्तरित करवा देने की व्यवस्था राज्य द्वारा कर दी जाएगी ताकि ढोने में सुविधा रहे।

इस तरह हर रोज संख्या में दुगुनी होती मुद्राओं को सेनापति अपने दमखम पर जब तक ले जा पाएंगे, ले जाते रहेंगे, उन पर कोई बन्दिश नहीं रहेगी परन्तु जिस दिन इन मुद्राओं का वजन सेनापति की सामर्थ्य पर भारी पड़ जाएगा बस यह सिलसिला रूक जाएगा और उस दिन तक घर ले जायी गई समस्त मुद्राओं को इनका ईनाम मान लिया जाएगा। हमें विश्वास है कि सेनापति को हमारा यह निर्णय स्वीकार्य होगा। इतना कहकर सम्राट ने सेनापति की ओर देखा।

मैं सम्राट के निर्णय का आदर करते हुए उनके प्रति अपना आभार प्रकट करता हूँ। कहकर अपने महाराज के प्रति सम्मान दर्शाते हुए सेनापति ने सिर झुकाकर अभिवादन किया। मन ही मन सेनापति जी इस बात का अन्दाज़ा लगाकर बेहद खुश थे कि अपनी ताकत से वे खजाने से भारी संख्या में मुद्राएं अपने घर ले जाने में सफल रहेंगे। और इस तरह अगले दिन से ही राज्य कोष से घर तक मुद्रा ढोने का कार्य सेनापति द्वारा शुरू हो गया। उस दिन चूंकि पहला दिन था अतः सिर्फ एक मुद्रा लेकर जाते इस महानायक को आगे आने वाले दिनों की अल्पसंख्या का जरा सा भी आभास नहीं हुआ। आज के हिसाब से 5 ग्राम की यह मुद्रा जो 21 सेमी. व्यास की थी, भला दिक्कत भी क्या करती? इसी तरह दूसरे दिन 10 ग्राम, तीसरे दिन 20 ग्राम, चौथे दिन 40 ग्राम, पॉचवे दिन 80 ग्राम और छठे दिन 160 ग्राम के सिक्के ले जाना भी बेहद आसान कार्य रहा।

सातवें दिन मुद्रा का भार 320 ग्राम पहुंच गया और व्यास लगभग 8.5 सेमी.। आठवें दिन यह भार था 64 ग्राम तथा व्यास 10.5 सेमी. जिसे 128 सिक्कों से

ढालकर बनाया गया था। नवें दिन 256 सिक्कों से बनी मुद्रा का भार 1.28 किग्रा तक पहुंचा और व्यास रहा 13 सेमी.। इसी तरह 12 वें दिन 27 सेमी व्यास वाली मुद्रा का भार हो गया 10.240 किग्रा। 13 वें दिन 34 सेमी. व्यास वाली मुद्रा ने वजन दर्शाया 20.48 किग्रा। जबकि 14 वें दिन 42 सेमी. व्यास के साथ इसका भार रहा 40.96 किग्रा और पन्द्रहवें दिन तो 53 सेमी के साथ जब इसका भार 81.920 किग्रा हो गया तो पहली बार सेनापति को इसे घर तक ले जाने में थोडा परिश्रम करना पडा।

सोलहवें दिन 32768 मुद्राओं के बराबर ढले एक सिक्के का जो भार में 163.84 किग्रा था और व्यास में 67 सेमी, ढोते समय सेनापति को अच्छा खासा श्रम करना पड़ा। सत्रहवें दिन तो दृश्य पूरी तरह ही बदल गया । इस बार 327.68 किग्रा वजन के सिक्के को जिसका व्यास 84 सेमी था, सेनापति अपनी पीठ पर लादने की जगह उसे लुढकाते हुए घर तक ले गया। और इसके बात तो जो सोचा भी नहीं जा सकता था, वह हो गया। विश्वस्तर का यह योद्धा अठ्ठारहवें दिन तक ही अपने पुरस्कार स्वरूप प्राप्त इन मुद्राओं की ढुलाई कर सका और इस अन्तिम दिन जब उसने 131072 वास्तविक मुद्राओं से ढालकर बनाये गये सिक्के को जो भार में 655.360 किग्रा और व्यास में एक मीटर से भी अधिक था, घर तक लुढ़काते – धकियाते मुश्किल से पहुंचाया तो वहीं उसने इस प्रयास के अंत की घोषणा कर दी।

इतना जानने के बाद भी यह अन्दाजा लगा पाना आसान नहीं है कि सेनापति ने पुरस्कार के रूप में जितनी मुद्राओं की मांग की थी उसका कितना भाग वह अपने घर तक ले जा सका – आधा चौथाई, एक बटे आठ भाग या इसके कम–ज्यादा? यही जानने के लिए, सेनापति द्वारा शर्त से बाहर हो जाने पर, सम्राट ने दरबारियों को आदेश दिया कि सेनापति द्वारा ले जाई गई कुल मुद्राओं का योग निकलवाया जाय और जब योग आया तो सब देखकर हैरान रह गये कि सेनापति द्वारा ले जाई गई कुल मुद्राएँ थी 262143, बस। यानि सेनापति ने जितनी मुद्राओं की अपेक्षा की थी उसका सिर्फ उन्नीसवां भाग ही वह घर ले जा सका था। आश्चर्य होता है कि रणभूमि में इतने बड़े योद्धा को गणित का इतना भी ज्ञान नहीं था जिसके आधार पर वह कम से कम इससे होने वाले इतने बड़े नुकसान का अन्दाज़ा तो लगा सकता। गणित के प्रति बरती गई सेनापति की इस उपेक्षा का ही यह नतीजा रहा जो उसे इतनी बड़ी हानि उठानी पड़ी और साथ ही साथ सहना पड़ा एक तरह का अपमान भी।

इसीलिए तो कहा जाता है कि गणित सिर्फ विषय भर नहीं है, यह जीवन का एक अत्यावश्यक भाग है और सही तरह से जीवन जीने के लिए इससे दोस्ती करना बेहद जरूरी भी है और अत्यंत लाभप्रद भी।

लोकप्रिय बाल विज्ञान लेखक
ज्ञाशिम, 1525/1, अवध कालोनी
सुभाष नगर, बरेली– 243001

वैकल्पिक ऊर्जा स्रोत

कोयला विस्थापन के लिए आज दोगुने से भी अधिक नाभिकीय ऊर्जा गृहों की आवश्यकता है।

कोयल की विस्थापित करने के लिए 40 गुना अधिक 'पवन ऊर्जा' में वृद्धि की जाये। (पवन व सौर ऊर्जा, औसतन, 30% अधिक ऊर्जा उत्पन्न कर सकती है अथवा कुल मिलाकर 700 गिगावाट का स्थान ले सकती हैं। दूसरे अर्थों में कोयला ऊर्जा के 90% के 2100 गिगावाट विस्थापन, 2100 पवन या सौर ऊर्जा से एवं कोयला ऊर्जा के अतिरिक्त भार 1400 गिगावाट द्वारा होगा)।

कोयले को विस्थापित करने के लिए और सौर ऊर्जा में 700 गुना वृद्धि की आवश्यकता है।

कारों के लिए हाइड्रोजन बनाने के लिए पवन–ऊर्जा में 80 गुना वृद्धि की जाये।

विश्व की 1/6 कृषि–भूमि का उपयोग कर, 20 करोड कारों के लिए 'इथेनॉल' का उत्पादन करना होगा। (विश्व में लगभग 1 अरब 50 करोड हेक्टेयर कृषि भूमि है। मक्का, सोयाबीन, जैट्रोफा आदि से ईंधन तेल प्राप्ति की प्रबल संभावनाएं बनी हैं)।

अवनीश उनियाल

भारत में गणित की विकास यात्रा

गणित को प्रारम्भ से ही बहुत महत्वपूर्ण विषय माना जाता रहा है। वेदांग ज्योतिष में गणित की महत्ता इस प्रकार से दर्शाई गई है।

यथा शिखा मयूराणां नागानां मणयो यथा
तद्वद् वेदांगशास्त्राणां गणितं मूर्धनि स्थितम्।।

अर्थात् जिस प्रकार मयूरों की शिखाएं और नागों की मणियां सर्वोच्य स्थान पर रहती हैं उसी प्रकार वेदांग शास्त्र में गणित सर्वोपरि है। प्रसिद्ध जैन गणितज्ञ महावीराचार्य ने गणित के सम्बन्ध में यहाँ तक कहा है कि –

लौकिके वैदिके वापि तथा सामायिकोऽपि यः
बहुभिर्विप्रलापैः किं त्रैलोक्ये सचराचरे।
यत्किंचिद्वस्तु तत्सर्वं गणितेन विना न हि।।

अर्थात् सांसारिक, वैदिक, धार्मिक आदि सब कार्यों में गणित उपयोगी है। अधिक कहने से क्या लाभ इस समूचे विश्व में जो कुछ भी चल अचल है, उन सबका अस्तित्व गणित से पृथक् नहीं है।

यह तथ्य भारतीय मनीषियों, दार्शनिकों और तत्वेत्ता को भलीभाति ज्ञात था, इसी कारण उन्होंने प्रारम्भ से ही गणित के विकास पर विशेष ध्यान दिया। जब अरब एवं यूरोपियन देशों में गणित का ज्ञान नगण्य था भारत इस क्षेत्र में महान् उपलब्धियाँ अर्जित कर चुका था। भारतीय गणित के इतिहास का शुभारम्भ आदि ग्रन्थ ऋग्वेद से होता है। भारत में गणित के इतिहास को मुख्यततया 5 काल (खण्ड) में बांटा गया हैः–

1. आदि काल (500 ई. पू. तक) – इसे भी दो कालखण्डों में विभाजित किया गया है।
   (क) वैदिक काल (1000 ई. पू. तक)
   (ख) उत्तर वैदिक काल (1000 से 500 ई. पू. तक)
2. पूर्व मध्यकाल (500ई.पू. से 400 ई. तक)
3. मध्यकाल (400 से 1200 ई. तक)
4. उत्तर मध्यकाल (1200 ई. से 1800 ई. तक)
5. वर्तमान काल (1800 ई. के पश्चात)

आदिकाल – आदिकाल भारतीय गणित के इतिहास में अत्यन्त महत्वपूर्ण है। इस काल खण्ड में गणित की विभिन्न शाखाओं जैसे– अंकगणित, बीजगणित एवं रेखागणित को एक स्पष्ट स्वरूप प्रदान किया जा चुका था। आदिकाल को दो भागों में बांटा गया है।

(क) वैदिक काल – इस काल में रचित वेदों में संख्याओं और दाशमिक प्रणाली

का स्पष्ट उल्लेख मिलता है। ऋग्वेद की एक ऋचा है–

द्वादश प्रधयश्य क्रमेकं त्रीणि नभ्यामिक उच्चिकेत।
तस्मिन्त्सामकं त्रिशता न शंकवोऽर्पिता षष्टिर्न चलचलासह

अर्थात इसमें द्वादस अर्थात बारह, त्रीणि अर्थात तीन, त्रिशत अर्थात तीन सौ, षष्टि अर्थात साठ संख्याओं का प्रयोग दाशमिक प्रणाली के ज्ञान का स्पष्ट उदाहरण है। इस काल में शून्य तथा दाशमिक स्थानमान पद्धति का आविष्कार हुआ। यह निश्चित रूप से ज्ञात नहीं है कि शून्य का अविष्कार कब और किसने किया। किन्तु इसका प्रयोग वैदिक काल से होता रहा है। भारतीय गणितज्ञ ब्रह्मगुप्त ने अपने ग्रन्थ ब्रह्मगुप्त सिद्धांत में शून्य की व्याख्या क – क= 0 (शून्य) के रूप में की है। श्रीधराचार्य अपनी पुस्तक 'त्रिशविका' में लिखते है कि यदि किसी संख्या में शून्य जोड़ दें तो उस संख्या में कोई परिवर्तन नहीं होता है और यदि किसी संख्या में शून्य से गुणा करते है तो गुणनफल भी शून्य ही मिलता है। दाशमिक मान पद्धति भारत से ही अरब गई और अरब से पश्चिमी देशों में। यही कारण है कि अरब के लोग एक से नौ तक के अंकों को "हिन्दसा" कहते हैं और पश्चिमी देशों में आज भी इन अंको को 0, 1, 2, 3, 4, 5, 6, 7, 8, 9 को हिन्दू अरबीक न्यूमरल्स कहा जाता है।

यदि शून्य तथा दाशमिक स्थानमान पद्धति का आविष्कार न हुआ होता तो बड़ी से बड़ी संख्याओं को लिखना सम्भव नहीं होता। इसकी प्रशंसा करते हुये अमेरिका के प्रसिद्ध विद्वान डा. जी. बी. हाल्सटीड ने लिखाा है "इस अभावात्मक वस्तु को न केवल स्थानीय मान तथा संज्ञा प्रदान करना अपितु उसको चित्रित करना तथा इसको सांकेतिक चिन्ह प्रदान करना हिन्दुओं की एक विशेषता है जिसने इसको जन्म दिया है। यह निर्वाण को गति प्रदान करने के समान है। बुद्धि और शक्ति की व्यापक प्रगति के लिये गणित का अन्य कोई अविष्कार इतना अधिक प्रभावशाली सिद्ध नहीं हुआ"। श्लेगल ने भी माना कि वर्णमाला के पश्चात यह अविष्कार सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। भारतीयों ने शून्य अंक का केवल अविष्कार ही नही किया अपितु उसके आधार पर पूर्णपद्धति का निर्माण किया। शून्य एवं दाशमिक मान पद्धति का महत्व इसी से परिलक्षित होता है कि आज ये पद्धति सम्पूर्ण विश्व में प्रचलित है तथा इसके आविष्कार ने गणित एवं विज्ञान को प्रगति के अनेक उन्नत शिखरों तक पहुँचाया।

(ख)– उत्तर वैदिक काल (1000 से 500 ई. पू. तक) – विभिन्न प्रकार की वेदियों और उनपर विभिन्न आकारों आकृतियों को सही नाप से बनाने की प्रथा के कारण उत्तर वैदिक काल में रेखा गणित के सूत्रों का विकास हुआ जो शुल्व सूत्रों के रूप में उपलब्ध हैं। शुल्व का मतलब उस रस्सी से है जो यज्ञ की वेदी बनाने में माप के काम आती है। इनमें तीन सूत्रकार विशेष रूप से याद किये जाते हैं – बौधायन, आपस्तम्ब और कात्यायन। इनके अतिरिक्त मानव, मैत्रायण वराह एवं बाधुल का नाम भी यदा कदा दिखाई देता है।

इसी काल में यथार्थ समुचित काल निर्णय हेतु ज्योतिष का भी विकास हुआ। इसी कारण शुल्व काल को वेदांग ज्योतिष काल भी कहते हैं। वेदांग ज्योतिष (1000 ई.पू.) के अध्ययन से यह पता चलता है कि उस काल में ज्योतिषियों को अंक गणितीय मूल संक्रियाओं योग, गुणा, भाग आदि का ज्ञान था यथा–

तिथिमेकादशाम्यस्तां पर्वभांशसमन्विताम्।
विभज्य भसमूहेन तिथिनक्षत्रमादिशेत्।।

अर्थात तिथि को 11 से गुणा करे उसमें पर्व के भांश को जोड़ें और फिर नक्षत्र को बतावें।

जैन साहित्य में भी तत्कालीन, गणित का विस्तृत उल्लेख मिलता है। इसमें गणितीय सिद्धान्तों व अन्य गणितीय संक्रियाओं को सामान्य लोगों में उनकी भाषा और स्तर तक पहुँचाने की प्रवृत्ति दिखाई देती है। सूर्य प्रज्ञप्ति तथा चन्द्र प्रज्ञप्ति जैन धर्म के प्रसिद्ध धर्मग्रन्थ हैं। इनमें गणितानुयोग का वर्णन है। सूर्य प्रज्ञपित में दीर्घवृत्त का स्पष्ट उल्लेख मिलता है जिसे परिमण्डल के नाम से जाना जाता था। इससे स्पष्ट है कि भारतीयों को दीर्घवृत्त का ज्ञान मिनमैक्स से लगभग 150 वर्ष पूर्व हो चुका था। गणित एवं ज्योतिष के विकास में जैनाचार्यो का प्रशंसनीय योगदान रहा है। उन्होंने संख्या लेखन पद्धति, भिन्न त्रैराशिक व्यवहार तथा मिश्रानुपात, बीज गणितीय समीकरण एवं उनके अनुप्रयोग विविध कोणियां, क्रमचय संचय, घातांक एवं लघुगणक के नियम समुच्चय सिद्धान्त आदि विषयों पर विस्तार से चर्चा की है। लघुगणक के लिये अर्द्धच्छेद, चतुर्थच्छेद शब्दों का प्रयोग किया गया है। जान नेपियर के बहुत पहले लघुगणक का अविष्कार एवं अनुप्रयोग भारत में हो चुका था। बौद्ध साहित्य में संख्याओं का वर्णन तीन रूपों – संख्येय (जिन्हें गिनना संभव हो), असंख्येय (जिन्हें गिनना संभव न हो), तथा अनंत में किया है। इससे पता चलता है कि भारतीय विद्वानों को अनन्त का भी सुस्पष्ट ज्ञान था।

पूर्वमध्यकाल

इस काल में गणित का पर्याप्त विकास हुआ था। स्थानांग सूत्र, भगवती सूत्र और अनुयोग द्वारा सूत्र इस युग के प्रमुख गन्थ हैं। इनके अतिरिक्त जैन दार्शनिक उमास्वाति की कृति तत्वार्थाधिगम सूत्र भाष्य एवं आचार्य यतिवृषम् की कृति तिलोयपण्णती भी इस काल के प्रसिद्ध जैन ग्रन्थ हैं।

वक्षाली गणित नामक पुस्तक में अंक गणित की मूल संक्रियायें, दाशमिक अंकलेखन पद्धति, भिन्न, परिकर्म, वर्ग, घन, त्रैराशिक व्यवहार, इष्टकर्म (फाल्स पोजीशन का नियम) ब्याजरीति, क्रयविक्रय सम्बन्धी प्रश्न, सम्मिश्रण सम्बन्धी प्रश्न आदि का विस्तृत विवरण उपलब्ध है। वक्षाली गणित पूर्व मध्यकाल में हिन्दू गणित की एक मात्र लिखित पुस्तक है जिसके अवशेष कुछ पन्नों के रूप में वैक्षल ग्राम (पेशावर) में 1000 ई. में पाये गये थे। इस काल में लिखित सूर्य सिद्धान्त नामक पुस्तक में वर्तमान त्रिकोणमिति का विस्तृत वर्णन तो मिलता ही है इसके उत्कृष्ट स्वरूप का सम्यक विवेचन भी किया गया है।

इसमें ज्या, उत्क्रम ज्या तथा कोटिज्या के मान का उल्लेख किया गया है। ध्यातव्य है कि यही ज्या अरब जाकर जेब हो गई जिसका शाब्दिक अनुवाद लैटिन में जेब

(पॉकिट) अर्थात (साइनस) किया गया। यही (साइनस) शब्द आगे चलकर सिन हो गया। इस प्रकार कोटिज्या (कोसाइन) हो गया। त्रिकोणमिति के विस्तार में भी भारतीयों का बहुमूल्य योगदान है। स्पष्ट है कि 'त्रिकोणमिति' शब्द शुद्ध भारतीय है जो कालान्तर में ट्रिग्नौमिट्री हो गया। भारतीयों ने 'त्रिकोणमिति' का प्रयोग ग्रहों की स्थिति, गति आदि के निर्धारण में किया।

इस काल में बीजगणित का विस्तार गणित के क्षेत्र में एक क्रांतिकारी परिवर्तन था। इसका तात्पर्य यह है कि व्यक्त राशियों के स्थान पर अव्यक्त राशियों का प्रयोग करके गणितीय गुत्थियां सुलझाईं जाने लगी। वक्षाली पाण्डुलिपि में इष्ट कर्म में 1 अथवा 100 के स्थान पर अव्यक्त राशि कल्पित की गई है। गणितज्ञों का मानना है कि इष्टकर्म ही बीजगणित के विस्तार का आदि स्त्रोत है।

निसंदेह अंकगणित की भांति बीजगणित भी भारत से अरब पहुंचा। अरब देश के गणितज्ञ अलखबारीज्मी ने अपनी पुस्तक 'अलजब्र' में भारतीय बीजगणित पर आधारित विषय का प्रतिपादन किया है तथा उनकी पुस्तकों के नाम पर इस विषय का नाम "अलजब्रा" पड़ गया।

मध्यकाल या स्वर्णयुग

इस काल को भारतीय गणित का स्वर्णयुग कहा जाता है क्योंकि इस काल में आर्यभट्ट, ब्रहम्गुप्त, महावीराचार्य, भास्कराचार्य, जैसे अनेक श्रेष्ठ एवं महान गणितज्ञ हुये जिन्होंने गणित की सभी शाखाओं को जिनका प्रयोग आज भी किया जा रहा हैं विस्तृत व स्पष्ट रूप प्रदान किया। वेदों में जो सिद्वांत एवं विधियां सूत्र रूप में है वे अपनी पूर्ण सम्भावनाओं व अर्थों के साथ जन साधारण के सामने आई। भारतीय गणित के इस स्वर्णयुग की स्मृति में भारत ने अंतरिक्ष में जो प्रथम उपग्रह स्थापित किया, उसका नाम आर्यभट्ट के नाम पर रखा गया।

आर्यभट्ट का जन्म 476 ई. में हुआ था। वे एक क्रांतिकारी गणितज्ञ और ज्योतिषविद थे। उन्होंने पारम्परिक ज्ञान में आवश्यक संशोधन कर उसे व्यवस्थित किया और नये मौलिक निष्कर्ष भी प्राप्त किये। कहा जाता है कि आर्यभट्ट ने आर्यभट्टीय, आर्यभट्ट सिद्धांत और सूर्य सिद्धांत प्रकाश नाम से तीन ग्रन्थों की रचना की थी। किन्तु उनकी एक मात्र उपलब्ध कृति आर्यभट्टीय है। आर्यभट्टीय एक भव्य और मनारम ग्रन्थ है। यह प्रथम पौरुषेय ज्योतिष ग्रन्थ के रूप में भी जाना जाता है।

मध्यकाल में अनेक प्रसिद्ध गणितज्ञों ने गणित के क्षेत्र में मौलिक कार्य किये। जिनमें भास्कर (प्रथम) (600 ई.), ब्रह्मगुप्त (1039 ई.), महावीराचार्य (850 ई.), श्रीधराचार्य (850 ई.), आर्यभट्ट द्वितीय (950 ई.) श्रीपति मिश्र (1039 ई.), नेमीचन्द्र सिद्धांत चक्रवर्ती (11वी सदी) तथा भास्कराचार्य (द्वितीय) (1114 ई.) का नाम प्रमुखता से लिया जाता है। इस काल के अंतिम तथा आद्वितीय गणितज्ञ भास्कराचार्य द्वितीय ने अपनी प्रसिद्व पुस्तकों सिद्धान्त शिरोमणि, लीलावती, बीजगणितम्, गोलाध्याय, गृहगणितम् एवं करणकुतूहूलम् में गणित की विभिन्न शाखाओं अंकगणित, बीजगणित, त्रिकोणमिति आदि को एक प्रकार से अंतिम रूप दिया।

उत्तर मध्य काल

भास्कराचार्य द्वितीय के बाद गणित में मौलिक कार्य अधिक नहीं हो पाया। प्राचीन ग्रन्थों पर टीकाएँ ही उत्तर मध्य काल की मुख्य देन हैं। केरल के गणितज्ञ नीलकण्ठ ने 1500 ई. मे एक पुस्तक में ज्या का मान निकाला जिसे आज हम ग्रेगरी श्रेणी के नाम से जानते हैं। इस काल के गणितज्ञों में नारायण पंडित (1356 ई.), कमलाकर (1608 ई.), सम्राट जगन्नाथ (1731 ई.) आदि का नाम उल्लेखनीय है। इनके द्वारा क्रमशः गणित कौमुदी, ताजिकनीलकण्ठी, सिद्धांत तत्त्व विवेक, सम्राट सिद्वान्त आदि ग्रन्थों की रचना की गई।

वर्तमान काल

वर्तमान काल के गणितज्ञों में नृसिंह बापूदेवशास्त्री (1831 ई.) सुधाकर द्विवेदी, स्वामी भारती कृष्ण तीर्थ जी महाराज आदि का नाम आता है। किन्तु भास्कराचार्य के पश्चात अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर ख्याति अर्जित करने वाले गणितज्ञ श्रीनिवास रामानुजम् का नाम सर्वाधिक उल्लेखनीय है। भारत सरकार द्वारा इस महान गणितज्ञ की 125 वीं जयन्ती के उपलक्ष्य में वर्ष 2012 को राष्ट्रीय गणित वर्ष घोषित किया गया है। श्रीनिवास रामानुजम् ने अपनी गणितीय प्रतिभा से सम्पूर्ण विश्व को चकित कर दिया। उन्होंने अपने अल्प जीवन काल (सन् 1887 – सन 1920) में आश्चर्यजनक रूप से गणित में अनेक मौलिक कार्य किये। उनके अनेक सूत्र और सर्वसमिकाएँ आज कम्प्यूटर विज्ञान, सुपरस्ट्रिंग थ्योरी, कण भौतिकी, स्टेटिस्टिकल मैकेनिक्स और ब्रहमाण्डकीय में उपयोग हो रही हैं। किसी गणितज्ञ ने उनके बारे में कहा है कि उनका दो दशकों का कार्य गणितज्ञों को दो शताब्दियों तक व्यस्त रखने के लिए पर्याप्त है।

रामानुजम् का प्रथम शोधपत्र सन् 1911 में जर्नल ऑफ इंडियन मैथेमेटिकल सोसाइटी में प्रकाशित हुआ। यह बरनोली संख्याओं पर था। इसी शोधपत्रिका में 1912 और 1913 में भी उनके शोधपत्र प्रकाशित हुये। दुर्भाग्यवश 26 अप्रैल 1920 को अल्पायु में ही उनकी मृत्यु हो गई। इस महान गणितज्ञ की जीवन यात्रा व गणित में उनके द्वारा हासिल की गई महान उपलब्धियाँ हमेशा याद की जायेंगी तथा सभी के लिये प्रेरणास्त्रोत बनी रहेंगी।

भारत में गणितीय विकास की यात्रा का अध्ययन करने पर यह स्पष्ट दिखाई देता है कि यहाँ प्राचीन समय से ही आधारभूत संकल्पनाओं, सिद्धान्तों व गणितीय संक्रियाओं की उत्पत्ति हुई। किन्तु सैकड़ो वर्षों की गुलामी तथा आक्रमणों को झेलने के कारण ज्ञान की इस परम्परा व अन्वेष्णात्मक कार्यों को अपेक्षित रूप से सहेजा व आगे बढ़ाया नहीं जा सका। जिस कारण बहुत सी महत्वपूर्ण पुस्तकें जिनमें ज्ञान का अथाह भण्डार है आज अप्राप्य हैं।

आज आवश्यकता इस बात की है कि हम अपने गौरवशाली इतिहास से प्रेरणा लेकर गणित को वही सर्वोच्च प्रतिष्ठापूर्ण

प्रवक्ता गणित
राजकीय इंटर कॉलेज, पुजार गांव,
सकलाना, जि. टेहरी गढ़वाल

विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग

समाचार-पत्रक
जुलाई - सितम्बर 2012

उत्तराखण्ड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद

महानिदेशक की कलम से

परिषद 'विज्ञानम् लोकहिताय' के अपने उददेश्य के अनुरूप विज्ञान के जनपक्षीय उपयोग के लिये निरन्तर प्रयत्नशील है। इसी क्रम में परिषद के मुखपत्र 'विज्ञान परिचर्चा' का तृतीय वार्षिकांक जुलाई–सितम्बर, 2012 पत्रिका के सूची पाठकों के सम्मुख प्रस्तुत है।

इस त्रैमास में परिषद ने जहां अपने पूर्व नियत कार्यक्रमों को मूर्तरूप दिया है वहीं परिषद के कार्यक्रमों एवं गतिविधियों को नये आयाम और विस्तार देने का प्रयास किया हैं परिषद के प्रमुख आयोजन राज्य विज्ञान कांग्रेस के माध्यम से राज्य की महिला वैज्ञानिकों एवं विज्ञान की छात्राओं की ऐसे कार्यक्रमों में तुलनात्मक भागीदारी के अध्ययन से निष्कर्ष निकला है कि उत्तराखण्ड राज्य के स्तर पर उनकी भागीदारी औसत राष्ट्रीय औसत से अधिक है।

संचार के क्षेत्र में आयी क्रांति विज्ञान का एक बड़ा वरदान है। सूचना तंत्र के बेहतर उपयोग और परम्परागत क्षेत्र से हटकर अन्य क्षेत्रों जैसे आपदा प्रबन्धन, पर्यावरण सुरक्षा जैसे क्षेत्र में सूचना तकनीक के उपयोग को लेकर एक कार्यशाला का सफल आयोजन ग्रेफिक एरा विश्वविद्यालय, देहरादून में किया गया। बौद्धिक सम्पदा के क्षेत्र में शोध कार्यों को बढ़ावा देने के उद्देश्य से कुमांयू विश्वविद्यालय के यू0जी0सी0 एकेडमिक कालेज में एक कार्यशाला आयोजित की गयी। परिषद में स्थापित पेटेंट सूचना केन्द्र एवं सूक्ष्म लघु एवं मध्यम उद्योगों (MSMEs) द्वारा बौद्धिक सम्पदा एवं पेटेंट के पंजीकरण की कार्यवाही प्रारम्भ की जा चुकी है।

ग्राम झाझरा तहसील विकासनगर में विज्ञान धाम का निर्माण कार्य प्रगति पर है। राज्य के विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी मंत्री द्वारा निर्माण कार्य की प्रगति का जायजा लिया गया। उनके द्वारा निर्माण एजेंसी को कार्य शीघ्र पूरा करने के निर्देश दिये। मा0 मंत्री जी द्वारा विगत 12 जुलाई, 2012 को परिषद की समीक्षा बैठक में वर्षा जल संग्रहण की दिशा में विशेष प्रयास किये जाने व पाली हाउस तकनीकी पर किसानों को जानकारी देने पर कार्य करने हेतु कहा गया।

आगामी अवधि में सातवीं विज्ञान कांग्रेस (21 से 23 नवम्बर, 2012) के आयोजन सहित महत्पूर्ण कार्यक्रमों एवं केन्द्र अपने उद्देश्यों के अनुरूप प्रगतिशील है। विगत प्रकाशनों पर प्राप्त अनुकूल प्रतिक्रियाओं एवं उपयोगी सुझावों पाठकों का हार्दिक आभार है।

डा0 राजेन्द्र डोभाल
महानिदेशक

इस संस्करण में

- मा० मंत्री विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी ने किया विज्ञान धाम का निरीक्षण
- बौद्धिक संपदा के क्षेत्र में शोध को मिले बढ़ावा
  वायरलेस सेंसर की खूबियां
- कांच मिटाएगा प्लास्टिक का खतरा
- यूकॉस्ट के महानिदेशक, डा० राजेन्द्र डोभाल को उत्तराखण्ड गौरव
- पेटेंट सूचना केन्द्र द्वारा पेटेंट का पंजीकरण
- सूक्ष्म लघु एवं मध्यम उद्योगों द्वारा बौद्धिक संपदा के पंजीकरण की शुरूआत
- राष्ट्रीय एवं राज्य स्तर पर महिलाओं का विज्ञान एवं प्रौद्योगिक क्षेत्र में योगदान
- एल.बी.एस.एन.ए.ए. मसूरी में 'ग्रामीण समाज हेतु विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी–२०१२' विषय पर दस दिवसीय प्रशिक्षण कार्यक्रम में यूसर्क का प्रतिभाग

उत्तराखण्ड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद एवं Universities Journal of Phytochemistry and Ayurvedic Heights के संयुक्त तत्वाधान से परिषद के सभागार में दिनांक 02 जुलाई, 2012 को आयुर्वेद एवं परम्परागत भारतीय चिकित्सा में शोधार्थियों के लिये "Herbal Research, Opportunities and Challenges" नामक जरनल का विमोचन मुख्य अतिथि कृषि मंत्री हरक सिंह रावत द्वारा किया गया। इस अवसर पर डा0 रावत ने औषधियों की खेती के महत्व को रेखांकित करते हुए इस संबंध में पत्रिका के योगदान की सराहना की। यूकॉस्ट के महानिदेशक ने जड़ी बूटी कृषिकरण को रोजगार के अवसरों के सृजन का जरिया बताते हुए शोध छात्रों को इस दिशा में प्रयास करने की आवश्यकता बताई व ऐसे शोध कार्य के लिये परिषद की ओर से सहयोग व प्रोत्साहन का आश्वासन दिया। पत्रिका के मुख्य संपादक डा0 फारूक ने अवगत कराया कि पत्रिका के द्वारा किस प्रकार अंर्तराष्ट्रीय स्तर पर आयुर्वेदिक औषधियों के क्षेत्र में शोध एवं उत्पादन को मान्यता दिलाये जाने के प्रयास किये जा रहे हैं।

मा० मंत्री विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी ने किया विज्ञान धाम का निरीक्षण

राज्य के विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी मंत्री सुरेन्द्र सिंह नेगी ने दिनांक 12 जुलाई, 2012 को झाझरा में बन रहे विज्ञान धाम का निरीक्षण किया। उन्होंने उत्तराखण्ड विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद से राज्य के विकास के लिए भागीदारी सुनिश्चित करने को कहा। निर्माणाधीन विज्ञान धाम के निरीक्षण के दौरान विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी मंत्री सुरेन्द्र सिंह नेगी ने निर्माण कार्य में तेजी लाने के साथ ही गुणवत्ता का ख्याल रखने के निर्देश दिए। श्री नेगी ने यूकॉस्ट की समीक्षा बैठक भी ली। इस अवसर पर उन्होंने कहा कि यदि तीन फीसदी वर्षा जल का संग्रहण कर लिया जाए तो पीने के पानी के साथ ही सिंचाई आदि की समस्या भी दूर हो पाएगी। इस सम्बंध में विभागीय मंत्री ने योजना बनाने के निर्देश दिए। पॉली हाउस को आंधी – तूफान से बचाने के लिए किसानों को खास तकनीक सिखाने की बात भी कही गई। विभागीय मंत्री ने पेयजल समस्या दूर करने के लिए रिवर बैंक फिल्ट्रेशन को बढ़ावा देने के लिए खास प्रयास की आवश्यकता जताई।

बौद्धिक संपदा के क्षेत्र में शोध को मिले बढ़ावा

बौद्धिक संपदा विशेष नवीन रचनात्मक विचार है। शिक्षकों, शोध कार्यों से जुड़े विद्वानों को अपने मौलिक लेखन एवं विचारों की सामाजिक उपयोगिता के आंकलन के बाद ही उसका कॉपीराइट और पेटेंट कराना चाहिए। यह बात उत्तराखण्ड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद के महानिदेशक ने कुमाऊ विश्वविद्यालय के यूजीसी एकेडेमिक स्टाफ कालेज में 'उत्तराखण्ड में बौद्धिक संपदा अधिकार' विषय पर आयोजित दो दिवसीय सेमिनार के उद्घाटन के दौरान कही। उन्होंने देश में शिक्षा और बौद्धिक संबंधों को पुनः परिभाषित करने पर जोर दिया। भारतीयों को विज्ञान के क्षेत्र में अधिक से अधिक शोध कर पेटेंट हासिल करना चाहिए।

यूकॉस्ट के महानिदेशक ने कहा कि नैनीताल समेत पंतनगर, दून यूनिवर्सिटी, पेट्रालियम यूनिवर्सिटी एवं गढ़वाल यूनिवर्सिटी एवं गढ़वाल यूनिवर्सिटी में बौद्धिक संपदा अधिकार (आईपीआर) के पांच सेंटर खुलेंगे। इसके लिए काम जोरों पर है और जल्द ही सेल का गठन किया जाएगा। उत्तराखण्ड में जड़ीबूटी के सेक्टर में ड्रग डिस्कवरी, पहाड़ियों में प्रचलित बाल मिठाई में खाने के डिजाइन लेकर उन्हें भौगालिक संकेतांक में रखने के बाद उनका पेटेंट किया जाएगा।

वायरलेस सेंसर की खूबियां

वायरलेस सेंसर नेटवर्क न केवल युद्ध क्षेत्र बल्कि मोबाइल एप्लिकेशन, आपदा प्रबंधन, पर्यावरण संरक्षण के क्षेत्र में भी मददगार साबित हो सकता है। ग्राफिक एरा यूनिवर्सिटी में शनिवार को 'वायरलेस सेंसर नेटवर्क्स' विषय पर हुए फैकल्टी डेवलपमेंट प्रोग्राम में वायरलेंस सेंसर के विभिन्न प्रयोगों पर चर्चा की गई।

महानिदेशक, युकॉस्ट ने कहा कि सूचना तंत्र पूरी तरह वायरलेस नेटवर्क पर निर्भर है। ग्राफिक एरा यूनिवर्सिटी के चेयरमैन कमल घनशाला ने संचार क्रांति का श्रेय इलेक्ट्रानिक एंड कम्युनिकेसन इंडस्ट्री को दिया। वायरलेस नेटवर्क इन ट्रेसिंग टाक्सिक वेस्ट विषय के अंतर्गत जहर फैलाने वाले कूड़े–करकट का पता लगाने में इस तकनीक के प्रयोग की बात कही गई। कार्यक्रम में न्यूक्लियर प्लांट के संचालन के लिए पर्यावरणीय जानकारी, तापमान, ध्वनि आदि पर मानिटरिंग के लिए भी इस तकनीक का उपयोग किए जाने की जानकारी दी गयी।

कांच मिटाएगा प्लास्टिक का खतरा

हानिकारक कांच पर्यावरण के दूसरे बड़े खतरे प्लास्टिक से निजात दिलाएगा। उत्तराखण्ड विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद ने ऐसी तकनीक ईजाद की है जिससे बेकार कांच का उपयोग प्लास्टिक के निस्तारण में किया जा सकेगा। सिर्फ यही नहीं निस्तारित कांच सड़क बनाने में भी काम आएगा और प्लास्टिक से बेहद सस्ता ईंधन तैयार किया जा सकेगा। शोध को पेटेंट भी करा लिया गया है।

विभिन्न तरह के कांचों में सिलिका, मर्करी व लैड जैसे हानिकारक तत्व होते है। इसी तरह प्लास्टिक कचरा पर्यावरण के लिए खतरा बना हुआ है। दोनों के एक साथ निस्तारण के लिए यूकॉस्ट ने 'अपशिष्ट कांच के प्रयोग से अपशिष्ट प्लास्टिक का विखंडन' नामक शोध परियोजना पर कार्य किया। इस शोध को अंजाम दिया डाल्फिन पी. जी. पैरामैडिकल कॉलेज पर्यावरण विज्ञान के एसोसिएट प्रोफेसर डॉ0 दीपक पंत ने। शोध के लिए उन्होंने पर्यावरण के लिए सबसे अधिक हानिकारक बेकार पड़ें रंगीन कांच को लिया। खात रियेक्टर के माध्यम से कांच की थर्मल व थर्मो आयन क्रिया कराकर उन्होंने बेहद सुरक्षित विधि से प्लास्टिक के निस्तारण में सफलता हासिल की। साथ ही शोध कार्य से कांच का वह स्वरूप प्राप्त हुआ जिसका इस्तेमाल न सिर्फ सड़कों की हॉट मिक्सिंग में किया जा सकता है, बल्कि उसके हानिकारक भारी तत्व भी खत्म हो जाते है। डॉ0 पंत के मुताबिक क्रिया के बाद प्लास्टिक निस्तारण से द्रव ईंधन मिलता है, जिसका उपयोग बेहद सस्ता गैसोलीन, एलपीजी व वैक्स बनाने में किया जा सकता है।

यूकॉस्ट के महानिदेशक, डा० राजेन्द्र डोभाल को उत्तराखण्ड गौरव

श्री देव विमल हर्बल हेरिटेज एंड एजुकेशनल सोसायटी और द हिमालय पब्लिक स्कूल के तत्वाधान में स्वर्गीय देवदत्त आर्य की दसवीं पुण्यतिथि पर दिनांक 09 सितम्बर, 2012 को दस हस्तियों को उत्तराखण्ड गौरव से अंलकृत किया गया।

समारोह में महंत देवेंद्र दास, डॉ. प्रियंवदा, नीना सिंह, डॉ. राजेन्द्र डोभाल, आनंद प्रकाश शर्मा, श्याम सुंदर गोयल, सैय्यद हारून अहमद, डां0 विनोद चंद विद्यालंकार, देवेश्वरी नेगी, राइफलमैन स्वर्गीय भगवान सिंह नेगी (मरणोपरांत) को उत्तराखण्ड गौरव से अलंकृत किया गया।

पेटेंट सूचना केन्द्र द्वारा पेटेंट का पंजीकरण

उत्तराखण्ड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद में बौद्धिक संपदा अधिकार हेतु एक पेटेंट सूचना केन्द्र की स्थापना की गयी है। यह केन्द्र विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी मंत्रालय द्वारा सहायता प्राप्त है वर्तमान में केन्द्र द्वारा पेटेंट सर्च की निःशुल्क सुविधा प्रदान की रही है।

केन्द्र को अब तक कुल 18 आवेदन पंजीकरण हेतु प्राप्त हो चुके है जिसमें 3 पेटेंट, टाईफैक, नई दिल्ली द्वारा प्रोविजनल पंजीकरण हेतु प्राप्त हो चुके है, शेष आवेदन पंजीकरण हेतु प्रक्रियाधीन है।

सूक्ष्म लघु एवं मध्यम उद्योगों द्वारा बौद्धिक संपदा के पंजीकरण की शुरूआत

उत्तराखण्ड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद के तत्वाधान में सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्योगों हेतु बौद्धिक सम्पदा सुविधा केन्द्र की स्थापना की जा चुकी है। केन्द्र सूक्ष्म लघु एवं मध्यम उद्योगों को बौद्धिक संपदा के पंजीकरण में सहायता प्रदान करता है। वर्तमान में केन्द्र द्वारा तीन (3) पेटेंट तथा आठ (8) ट्रेडमार्क पंजीकरण हेतु बौद्धिक संपदा कार्यालय, नई दिल्ली को प्रेषित किए जा चुके हैं। केन्द्र एक भौगोलिक संकेतन (जी0आई0) को पंजीकृत करने हेतु भी प्रयासरत है। केन्द्र प्रभारी डॉ0 सरिता खण्डका द्वारा 05 अक्टूबर, 2012 को नई दिल्ली में आई0पी0एफ0सी0 की बैठक में प्रतिभाग किया तथा आईपी0एफ0सी0 देहरादून द्वारा किये जा रहे कार्यों को ब्यौरा दिया। वहां पर आई0पी0 एफ0सी0 देहरादून द्वारा किये जा रहे कार्यों को सराहना की गयी।

राष्ट्रीय एवं राज्य स्तर पर महिलाओं का विज्ञान एवं प्रौद्योगिक क्षेत्र में योगदान

उत्तराखण्ड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद द्वारा प्रदेश में विज्ञान लोकव्यापीकरण, शोध एवं विकास, प्रौद्योगिकी स्थानान्तरण जैसे विभिन्न कार्यक्रम प्रदेश हित में चलाये जा रहें हैं। इसी क्रम में शोध एवं विकास को उचित प्रोत्साहन एवं गतिशीलता प्रदान करने हेतु परिषद द्वारा प्रत्येक वर्ष उत्तराखण्ड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी कांग्रेस का आयोजन किया जाता है। अभी तक कुल छः विज्ञान कांग्रेसों का आयोजन किया जा चुका है एवं सातंवी विज्ञान कांग्रेस 21–23 नवम्बर, 2012, तक ग्रेफिक एरा विश्वविद्यालय, देहरादून में आयोजित की जायेगी। गत वर्षो में परिषद के इस अनूठे प्रयास में प्रदेश के शोधार्थियों एवं वैज्ञानिकों ने बढ़–चढ़ कर प्रतिभाग किया। उक्त कांग्रसों में महिलाओं की भागीदारी पर एक अध्ययन डा0 सरिता खण्डका, डा0 राजेन्द्र डोभाल एवं नसरीन जिलानी द्वारा किया गया। इस अध्ययन को Current Science के 10 अक्टूबर, 2012 के अंक में प्रकाशित भी किया गया है। इस अध्ययन के परिणामों की राष्ट्रीय स्तर की विज्ञान कांग्रेस में महिलाओं द्वारा भागीदारी के साथ तुलना की गयी।

अध्ययन के दौरान कुछ सुखद वाले परिणाम सामने आये। यह पाया गया कि हालांकि उत्तराखण्ड राज्य विज्ञान कांग्रेस में महिलाओं का औसत प्रतिभाग मात्र 47 प्रतिशत है जबकि उनके द्वारा प्राप्त युवा वैज्ञानिक पुरस्कार का प्रतिशत 52 प्रतिशत है जोकि औसत युवा वैज्ञानिक पुरस्कार (पुरूषों) से लगभग 4 प्रतिशत अधिक है (Figure 1 a & 1 b)। साथ ही उत्तराखण्ड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी कांग्रेस के दौरान प्रदान औसत युवा वैज्ञानिक पुरस्कर (महिला), राष्ट्रीय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी कांग्रेस के दौरान प्रदान किये गये युवा वैज्ञानिक पुरस्कर (महिला) से लगभग 18 प्रतिशत अधिक है जबकि राष्ट्रीय एवं राज्य स्तर पर महिला साक्षरता का अन्तर मात्र 5.24 प्रतिशत है।

अध्ययन के दौरान यह निष्कर्ष निकाला गया कि उत्तराखण्ड राज्य में महिलाओं की भागीदारी उच्च शिक्षा में अधिक है एवं उसे सामाजिक प्रोत्साहन भी मिल रहा है। अतः प्रदेश को युवा महिला वैज्ञानिकों की विशेषज्ञता के इस्तेमाल के लिये योजनाएं एवं नियोजन कार्य शुरू करने चाहिए। इन योजनाओं के क्रियान्वयन से महिला वैज्ञानिकों की सेवाओं का राज्य पूर्ण रूप से उपयोग कर पाएगा एवं राज्य में उपलब्ध इस मानव संसाधन को भी सही दिशा मिल पाएगी।

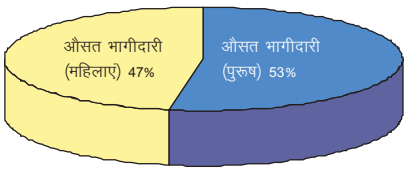

पुरूष–महिला औसत भागीदारी
(उत्तराखण्ड राज्य विज्ञान कांग्रेस)

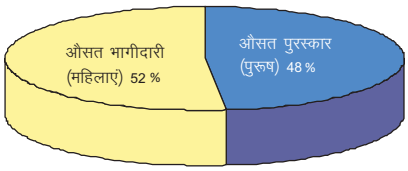

महिला–पुरूष औसत पुरस्कार
(उत्तराखण्ड राज्य विज्ञान कांग्रेस)

उत्तराखण्ड विज्ञान शिक्षा एवं अनुसंधान केन्द्र (यू-सर्क)

एल.बी.एस.एन.ए.ए. मसूरी में 'ग्रामीण समाज हेतु विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी-२०१२' विषय पर दस दिवसीय प्रशिक्षण कार्यक्रम में यूसर्क का प्रतिभाग

लाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रीय प्रशासनिक अकादमी मसूरी में आपदा प्रबन्धन केन्द्र द्वारा दिनांक 20/08/2012 से 30/08/2012 तक आयोजित दस दिवसीय प्रशिक्षण कार्यक्रम 'ग्रामीण समाज हेतु विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी'–2012' में उत्तराखण्ड विज्ञान शिक्षा एवं अनुसंधान केन्द्र (यू–सर्क) के वैज्ञानिक डा0 ओम प्रकाश नौटियाल ने सक्रिय प्रतिभाग किया। प्रशिक्षण के दौरान जनपद–देहरादून के डोईवाला ब्लॉक के अर्न्तगत 'रैनापुर ग्रान्ट' ग्राम पंचायत के अर्न्तगत घमण्डपुर, रैनापुर, लिस्टावाद एवं लिस्ट्रापुर गॉवों का सामाजिक एवं आर्थिक सर्वेक्षण किया, जिसकी विस्तार में रिपोर्ट (आख्या) लाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रीय प्रशासनिक अकादमी– मसूरी तथा उत्तराखण्ड विज्ञान शिक्षा एवं अनुसंधान केन्द्र (यू–सर्क) में जमा की गयी। उक्त अध्ययन में ग्रामसभा रैनापुर ग्रान्ट में मूलभूत सुविधाओं, आर्थिकी, स्वास्थ्य, शिक्षा, जागरूकता, सामाजिकता, कृषि एवं पशुपालन विषयों का अध्ययन किया गया तथा ग्रामसभा के उत्थान हेतु विभिन्न कार्ययोजनाओं के क्रियान्वयन का सुझाव भी दिया गया।

अध्ययन में गॉवों में सड़क की स्थिति काफी दयनीय पायी गयी, पीने के पानी की उपलब्धता के बावजूद लगातार जलापूर्ति न होने की बात सामने आयी। ग्राम सभा के सबसे विशाल गॉव घमण्डपुर के निवासियों को उचित मूलभूत सुविधाओ यथा बैंक, पोस्टऑफिस, स्वास्थ्य तथा माध्यमिक शिक्षा हेतु ग्राम सभा से 5 किमी. दूर रानीपोखरी जाना पडता है। घमण्डपुर गॉव में एक प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र की स्थापना तो की गई है परन्तु उसमें चिकित्सक एवं औषधियां उपलब्ध नहीं है। उक्त ग्राम सभा के प्राथमिक एवं उच्चप्राथमिक विद्यालयों के अध्ययन से ज्ञात हुआ कि प्राथमिक एवं उच्च प्राथमिक विद्यालयों मे अध्ययनरत छात्र–छात्राओं के माता–पिता मे साक्षरता प्रतिशत 91% है। विद्यालयो में पठन पाठन की स्थिति सराहनीय परन्तु कम्प्यूटरों की उपलब्धता के बावजूद अध्यापकों के कम्प्यूटर प्रशिक्षित न होने के कारण कम्प्यूटर शिक्षण निराशाजनक पाया गया। स्कूलों के 90% बच्चों में उचित टीकाकरण पाया गया। 98% बच्चे मध्याह्न भोजन से सन्तुष्ट पाये गये, जबकि 2% बच्चे निजि–पारिवारिक कारणो से अपना भोजन लेकर आते है।

सर्वेक्षण के अनुसार गॉव मे प्रत्येक व्यक्ति रामदेव एवं अन्ना हजारे का नाम एवं काम जानते है, परन्तु अधिकतर लोग प्रधानमंत्री, राष्ट्रपति राज्य के मुख्यमन्त्री, राज्यपाल के नाम से अनभिज्ञ पाये गये। ग्रामसभा में सरकार द्वारा चलायी जा रही विभिन्न जन उपयोगी योजनाओ के बारे में जानकारी का अभाव देखा गया, गॉव में तम्बाकू का प्रयोग काफी कम पाया गया। गॉव में 62 प्रतिशत कच्चे मकान पाये गये। ग्राम सभा में 20% महिलाओं में रक्तअल्पता (एनिमिया) पायी गयी, जिससे वे अनभिज्ञ थे। गॉव में कम उम्र में विवाह का प्रचलन नहीं पाया गया।

ग्रामसभा में कृषि उत्पादन अच्छा पाया गया परन्तु जंगली जानवरों हाथियों एवं बन्दरों द्वारा कृषि उत्पादों को क्षति पहुंचयी जाती है। पशुओं हेतु चारा सामान्यतः हर मौसम में उपलब्ध रहता है। पशुओं में प्राकृतिक प्रजनन के बजाय सम्पूर्ण ग्रामसभा में पशुपालन विभाग के सहयोग से 99% पशुओं (गाय एवं भैंसो) में कृत्रिम विधि से प्रजनन करवाया जाता है।

अध्ययन में ग्रामसभा के जीवन स्तर के उत्थान एवं संवर्धन हेतु जंगली जानवरों से कृषि धन के बचाव हेतु स्थायी समाधान किये जाने, विद्यालय के शिक्षको को कम्प्यूटर प्रशिक्षित किये जाने, सड़क एवं मूलभूत सुविधाओ बैंक, पोस्ट ऑफिस, अस्पताल तथा माध्यमिक विद्यालय की सुलभता सुनिश्चित करने, प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र घमण्डपुर में चिकित्सक एवं औषधि की उचित व्यवस्था करने ग्रामवासियों को सरकार की विभिन्न जनोपयोगी योजनाओं की जानकारी प्रदान करने, नवीनीकृत ऊर्जा के उपयोग हेतु लोगो को प्रेरित करने, ग्रामसभा में पानी एवं सिचाई के जल के सुचारू आपूर्ति की उचित व्यवस्था करने तथा कृशि व पषुओं की स्थिति में सुधार हेतु ग्रामपंचायत स्तर पर कृषकों की एक सहकारी संस्था के गठन के सुझाव दिये गये।

uCost
यूकॉस्ट
विज्ञानम् लोकहिताय

PATENT INFORMATION CENTRE(PIC)

वर्तमान में बौद्धिक सम्पदा अधिकार को सुरक्षित करना विश्व स्तर पर एक महत्वपूर्ण विशय बन गया है। प्रदेश में विभिन्न प्रकार के परम्परागत ज्ञान के साथ-साथ गैर परम्परागत ज्ञान उपलब्ध है। इस तारतम्य में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग, भारत सरकार, नई दिल्ली के वित्तीय एवं तकनीकी सहयोग द्वारा प्रदेश के विभिन्न अनुसंधानकर्ताओं/ औद्योगिक क्षेत्रों / अनुसंधान व विकास संस्थानों / विश्वविद्यालयों एवं अन्य की सुविधा के लिए उत्तराखण्ड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद् (यूकॉस्ट) में पेटेन्ट सूचना केन्द्र की स्थापना की गई है। इस केन्द्र में अनुसंधान से होने वाली विकसित प्रौद्योगिकी को पेटेन्ट कराया जा सकता है।

केन्द्र के मुख्य उद्देश्य

- बौद्धिक सम्पदा अधिकारों का प्रचार प्रसार एवं विश्वविद्यालयों, शोध संस्थानों, उद्योगों एवं शासकीय विभागों को माँग के आधार पर पेटेन्ट सर्च की सुविधा उपलब्ध करवाना।
- पेटेन्ट सूचनाओं का परीक्षण तथा अनुसंधान एवं विकास से जुड़ी संस्थाओं को नयी योजनाओं के निर्धारण में सहायता देना।
- अन्वेषकों को उनके कार्य का पेटेन्ट दिलवानें हेतु मार्गदर्शन करना।
- प्रदेश में उपलब्ध बौद्धिक सम्पदा की सुरक्षा के उपाय करना।

INTELLECTUAL PROPERTY FACILITATION CENTRE (IPFC)

सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्यम (MSMEs) मंत्रालय द्वारा स्वीकृत (सहायता प्राप्त), प्रदेश के प्रथम बौद्धिक सम्पदा सुविधा केन्द्र (IPFC) की स्थापना, उत्तराखण्ड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिशद (UCOST) उत्तराखण्ड, देहरादून में की जा चुकी है। आई0पी0एफ0सी0 (IPFC) सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्यम (MSMEs) के अन्तर्गत पेटेन्ट फाइलिंग, ट्रेडमार्क रजिस्ट्रेशन, इंडस्ट्रियल डिजाईन इत्यादि सम्बन्धि कार्य करेगा। साथ ही यह केन्द्र पेटेन्ट, ट्रेडमार्क, कॉपीराइट तथा इंडस्ट्रियल डिजाईन इत्यादि समबन्धि सुझाव लोगों को देगा एवं इनसे समबन्धित कानूनी सलाह भी इस परियोजना का मुख्य लक्ष्य है। इस केन्द्र के मुख्य उद्देश्य एवं सेवांए निम्नवत् है–

1. बौद्धिक सम्पदा अधिकार (IPR) विशयक जागरूकता एवं प्रोत्सहन हेतु कार्याशालाओं का आयोजन करना।
2. MSMEs क्षेत्र के लिए IPR की जरूरत का आकलन कर उसके अनुरूप सेवाएं उपलब्ध करवाना।
3. पेटेन्ट फाइलिंग व आनलाईन सर्च की सुविधा प्रदान करना।
4. पेटेन्ट, कॉपीराईट, डिजाईन एवं ट्रेडमार्क रजिस्ट्रेशन हेतु प्रोत्साहित करना।
5. सूक्ष्म लघु एवं मध्यम उद्योगों को पेटेन्ट समबन्धी सलाह देना तथा पेटेन्ट टूल की जानकारी प्रदान करना।
6. MSMEs क्षेत्र में एक नेटवर्क स्थापित करना जिससे बौद्धिक सम्पदा का सदुपयोग किया जा सकें।

चूँकि बौद्धिक सम्पदा 'मानव बुद्धि का एक उत्पाद है' यह केवल विधिवत स्वामी द्वारा या विधिवत स्वामी की अनुमति से ही इस्तेमाल किया जा सकता है।

TECHNOPRENEUR OUTREACH CENTRE (TePP)

वैज्ञानिक एवं औद्योगिक अनुसंधान विभाग (डी0एस0आई0आर0), भारत सरकार, नई दिल्ली द्वारा परिशद को Technopreneur Outreach Centre (TUC) स्वीकृत किया गया है। उक्त सेन्टर हेतु परिशद राज्य के आमजन–मानस तथा विद्यार्थियों (विषेशकर बी0टेक0 एवं एम0टेक0 डिजर्टेषन) से नवीन तकनीकों एवं आविश्कारों को व्यवसायिक प्रोत्साहन देने हेतु प्रस्ताव आमंत्रित करती है। उक्त केन्द्र के चार वर्ग 1) Micro Technopreneurship Support 2) TePP Project Fund 3) Seamless Scale-up Support for TePP एवं 4) Supplementary TePP Fund के अन्तर्गत निर्धारित प्रारूप पर प्रस्ताव आमंत्रित किये जाते हैं। प्रस्ताव बनाने सम्बन्धी जानकारी डी0एस0आई0आर0, नई दिल्ली की वेवसाईट http://www.dsir.gov.in एवं परिशद की वेबसाईट http://ucost.in पर उपलब्ध है।

पुरूषोत्तम उपाध्याय

आचार्य सुश्रुत

आधुनिक शल्य चिकित्सा के जनक

आज से 4000 वर्ष पहले जब पाश्चात्य देशों में अन्धकार-युग चल रहा था, हमारे पूर्वज विज्ञान के विभिन्न क्षेत्रों में महती खोज कर रहे थे। इनमें कपिल, भारद्वाज, पाणिनि, पतंजलिः, आर्य-भट्ट, भास्कराचार्य, चरक और सुश्रुत के नाम उललेखनीय है। विशेषतः गणित, खगोलविज्ञान, रसायनशास्त्र, भौतिकी, लौह शास्त्र और आयुर्विज्ञान के क्षेत्रों में हमारा देश संसार में अग्रणी था। आचार्य सुश्रुत भारत के उसी गौरवमयी इतिहास के एक मान्यवर महानायक हैं।

पाश्चात्य देशों के इतिहासकार भी मानते हैं कि आधुनिक सर्जरी के मूलभूत सिद्धान्तों एवम् अनेक प्रक्रियाओं की नींव आचार्स सुश्रुत ने, आज से 2600 वर्ष पहले रक्खी थी। सुश्रुत के विचार, उनका स्वतंत्र चिंतन और शल्यचिकित्सा के क्षेत्र में उनकी रचनात्मक उपलब्धियां, उनके समय से सैकड़ों शतक आगे थीं। इसीलिये चिकित्साजगत् उन्हें 'फादर ऑफ सर्जरी' अर्थात् 'शल्यचिकित्सा के जनक' के उपनाम से जानता है। यह लेख आचार्य सुश्रुत के अनूठे व्यक्तित्व का एक सूक्ष्म सा परिचय है।

शल्यचिकित्सा

वैदिक काल से, युद्ध शारीरिक चोट का मुख्य कारण रहा है। पुरातन भारत में, सर्जरी अर्थात् चीर–फाड़ की चिकित्सा को शल्य–तंत्र कहते थे क्योकि शल्य (शत्रु के बाण या भाले जैसे पैने हथियार का भाग) को शरीर से निकालने की क्रिया (तंत्र) सब से कठिन अथवा संकटपूर्ण चिकित्सा मानी जाती थी। बाद में इसे शल्यचिकित्सा कहने लगे। महाभारत में उल्लेख है कि शल्य चिकित्सक युद्ध के समय रणभूमि में जाकर घायल सैनिकों का उपचार करते थे। समय के साथ हर प्रकार की चीर–फाड़ चिकित्सा, शल्यचिकित्सा कहलाई जाने लगी।

सुश्रुत का परिचय

सुश्रुत विश्वामित्र के पुत्र थे, ऐसा सुश्रुत संहिता में लिखा है। किंतु यह विश्वामित्र कौन थे इसका पूरा विवरण कहीं नहीं मिलता। जब कि इस बात पर पूर्ण सहमति है कि सुश्रुत ने काशी नरेश दिवोदास से आयुर्वेद की, विशेषकर शल्यचिकित्सा की शिक्षा प्राप्त की। दिवोदास अपने समय के एक महान चिकित्सक थे और स्वयम् भगवान धन्वंतरि के अवतार माने जाते थे। सुश्रुत संहिता में अनेक स्थानों पर लिखा है "यथोवाच भगवान् धन्वंतरिः"। दिवोदास के अन्य विख्यात शिष्यों के नाम थे औपधानव, औराभ्र, वैतरन तथा पौषकलावतः। यह सभी शल्यचिकित्सक थे और इन सभी ने शल्यतंत्र पर अपनी अपनी संहिता लिखी।

सुश्रुत के जीवनकाल में काशी संसार का सबसे समृद्ध नगर था और विश्वविख्यात शिक्षा का केन्द्र भी। शल्यकर्म में प्रसिद्धि पाकर सुश्रुत काशी विश्वविद्यालय में आचार्य बनाये गये।

सुश्रुत के समय के बारे में कई धारणायें हैं। नागार्जुनरचित उपयहृदय में सुश्रुत का उल्लेख आता है। उनका नाम पतंजलि के महाभाष्य में भी है। पाणिनि द्वारा लिखित ग्रंथों में भी सुश्रुत का उल्लेख है। एक संस्कृत में लिखी पुरातन पांडुलिपि जो Bower manuscript के नाम से प्रसिद्ध है और जिसका काल ईसा से 400 वर्ष पूर्व आंका गया है। उसमें भी सुश्रुत का वर्णन है। यह पांडुलिपि अंग्रेज़ अफसर Lt. A. Bower को सन् 1890 में चीनी तुर्किस्तान के एक बौद्ध स्मारक में मिली थी इसलिये उनके नाम से जानी जाती है। हैसलर और मुखोपाध्याय के कथनानुसार सुश्रुत का समय 1000 बी. सी. होना चाहिये। किंतु, अधिकतर विद्वानों का मानना है कि सुश्रुत का जन्म ईसा से 600 वर्ष पूर्व, बुद्ध से कुछ समय पहले, प्रसिद्ध यूनानी चिकित्सक हिप्पोक्रेटीज़ से लगभग 200 वर्ष पूर्व हुआ।

भारत में शल्य चिकित्सा का इतिहास बहुत पुराना है। सिन्धु घाटी सभ्यता के अवशेषों में इसके चिन्ह देखने को मिलते हैं ऋग्वेद में अश्विनी कुमारों द्वारा की गई सफल सर्जरी का वर्णन है। वैदिक काल में शल्यचिकित्सा, आयुर्वेद की आठ शाखाओं में प्रथम और सबसे महत्वपूर्ण

शाखा मानी जाती थी।

सुश्रुतसंहिता ग्रंथ

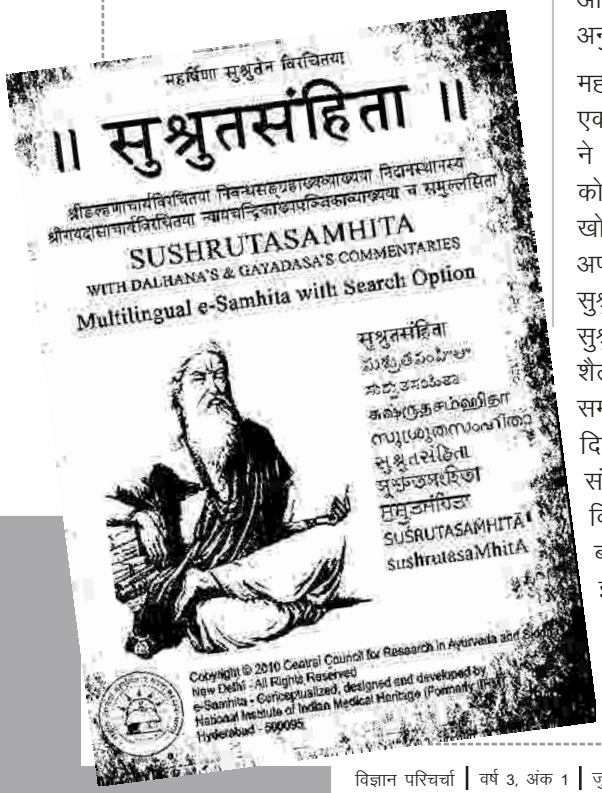

सुश्रुतसंहिता एक विशाल ग्रंथ है। इसमें 184 अध्याय हैं जिनमें 1120 प्रकार के रोग, 700 प्रकार की जड़ीबूटियां, 120 औषधियों का वर्णन है। इसका अंग्रेज़ी अनुवाद 1000 से अधिक पृष्ठों का है।

महाभारत के समय तक शल्यचिकित्सा एक सुस्थित विद्या बन चुकी थी। सुश्रुत ने शल्यक्रिया के समस्त उपलभ्य ज्ञान को संग्रहीत किया और उसमें निजी खोज और उपलब्धियों का समावेश करके अपनी पुस्तक लिखी जिसे प्रारंभ में सुश्रुततंत्र कहते थे। बाद में इसका नाम सुश्रुतसंहिता हो गया। संहिता की सरल शैली और सारगर्भित व्याख्या ने सभी समकालीन संहिताओं को गौण बना दिया। 2000 हज़ार वर्ष तक, सुश्रुत संहिता शल्यचिकित्सा की श्रेष्ठ, देश विदेशों में मान्य, एकमात्र पाठ्य पुस्तक बनी रही। संस्कृत में लिखी संहिता को इतनी प्रसिद्धी मिली कि कई भाषाओं में इसके अनुवाद हुए, विशेषकर पाली, नेपाली, तिब्बती, गंगोली, चीनी, फारसी और अरबी में। मैकडोनेल ने अपनी पुस्तक 'इंडियाज़ पास्ट' (आक्सफोर्ड – 1927) में लिखा है, "आठवीं शताब्दी में ईरान और अरब के लोगो ने 1000 वर्ष पुरानी सुश्रुतसंहिता का अपनी भाषाओं में अनुवाद किया"। इन अनुवादों के द्वारा भारतीय शल्यकर्म का ज्ञान सन् 750 में (अब्बासिद शासनकाल के दौरान) यूरोप के देशों में पहुंचा और इस प्रकार वर्तमान सर्जरी की नींव रक्खी। इसलिये सुश्रुत को शल्यचिकित्सा का जनक कहना अनुचित न होगा।

पुरातन काल में आयुर्वेद का ज्ञान वेदों, प्रबन्धों और कल्पों में बिखरा हुआ था। अग्निवेश ने 1200 बी. सी. में उस ज्ञान को इकट्ठा किया, सँवारा और संशोधित किया। चरकसंहिता उसी सुविकसित ज्ञान पर आधारित है। चरकसंहिता मुख्यतः कायचिकित्सा (medicine) का ग्रंथ है। इसमें शल्यचिकित्सा नाममात्र है। सुश्रुत ने शल्यचिकित्सा की असाधारण उपलब्धियों को संचित किया और उपने अनुभवों पर आधाररित सुश्रुत संहिता

लिखी जो आयुर्वेद का महत्वपूर्ण अंग बन गई। आज चरकसंहिता और सुश्रुतसंहिता आयुर्वेद के दो सशक्त स्तम्भ माने जाते हैं। प्रोफेसर ए. ॲल. बैशम ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'दी वन्डर दैट वाज़ इंडिआ' में लिखा है, "चरक और सुश्रुत संहिता उतनी ही विकसित रचनायें हैं जितनी हिप्पोक्रेटीज तथा गेलेन की थीं, अपितु किसी अंश तक यह उनसे भी कहीं अधिक विकसित हैं"।

संस्कृत में लिखी सुश्रुतसंहिता एक अद्वितीय पाठ्यपुस्तक है। सुश्रुत का कहना था कि शल्यकर्म में सफलता के लिये कायचिकित्सा (medicine) तथा अन्य संबंधित चिकित्सा विधियों का ज्ञान होना अति आवश्यक है। यद्यपि संहिता मुख्यतः शल्यचिकित्सा की पुस्तक है इसमें अन्य संबंधित चिकित्साओं का भी उल्लेख है। सुश्रुत ने बलपूर्वक कहा है "जब तक आप शल्यतंत्र से संबंधित अन्य सभी विषयों का ज्ञान नहीं रखते आपको शल्यचिकित्सा में प्रवीणता नहीं मिल सकती"। आचार्य सुश्रुत शल्यचिकित्सा की सफलता के लिए शरीर रचना (anatomy) का ज्ञान अति आवश्यक मानते थे। इस ज्ञान के बिना सर्जरी करना अंधेरे में तलवार चलाने जैसा है। इसके लिये सुश्रुत ने शवविच्छेदन (dissectionof dead bodies) का साहसपूर्ण काम किया। पंडितों और धर्माचायों के प्रतिरोध की उपेक्षा करते हुए, सुश्रुत गंगा में बहाये गये शवों को लाकर अथवा दफनाये शिशुओं के शव प्राप्त कर, स्वयम् उनका विच्छेदन (dissection) करते थे ताकि शरीर रचना का ज्ञान प्राप्त हो सके। बलि के लिये मारे गये पशुओं का भी शरीररचना के अध्ययन के लिये प्रयोग होता था।

जब कि चरक केवल उच्चवर्ग के (द्विजवर्ण के) विद्यार्थी को प्रशिक्षण के लिये लेते थे, सुश्रुत निम्नवर्ग (शूद्रवर्ण) के शिक्षार्थियों को भी अपनाते थे। किंतु सामयिक प्रथा के अनुसार सामारोहिक अवसरों पर केवल द्विजवर्ण के स्नातक ही जा सकते थे।

एक स्थान पर सुश्रुत ने लिखा है कि शल्यचिकित्सक गंभीर रोगियों को उनके घर जाकर देखते थे। शल्यचिकित्सक के निवास से जुड़ा रोगी देखने का कक्ष होता था, उसके साथ ही औषधि–भण्डार, और शल्यशाला (operation theatre)। शल्यशाला की स्वच्छता के लिये सुगंधित जड़ी–बूटियों से धूमित किया जाता था। रोगी की सेवा – शुश्रूषा के लिये परिचारक होते थे जिन्हें स्वच्छ और कुशल होने के साथ संवेदनशीन होना आवश्यक था। सुश्रुत इस बात को महत्वपूर्ण मानते थे कि परिचारिकायें निष्ठावान तथा शल्यचिकित्सक की आज्ञाकारी हों।

भ्रूणविज्ञान

सुश्रुत पहले व्यक्ति थे जिन्होंने भ्रूण (embryo) के बारे में सोचा। उन्होंने शरीर रचना (anatomy) के अध्ययन में भ्रूणविज्ञान (embryology) का विषय भी सम्मिलित किया। यह प्रथा आज तक चली आ रही है। सुश्रुत ने भ्रूण के अनुक्रमिक विकास के बारे में भी लिखा।

सुश्रुतसंहिता के दो भाग हैं पूर्वतंत्र एवम् उत्तरतंत्र पूर्वतंत्र में 120 अध्याय हैं जिनमें शरीर रचना (anatomy), निदानशास्त्र (diagnosis), औषधिशास्त्र (pharmacology), कायशास्त्र (medicine), प्रसूतिशास्त्र (obstetrics), आपात चिकित्सा (emergency), शिराचिकित्सा (venesection) बाल रोग चिकित्सा (pediatrics), जराचिकित्सा (geriatrics), वाजीकरण (aphrodisiacs), विषविद्या (toxicology) आदि का वर्णन है। पूर्वतंत्र का कल्प–स्थान मुख्यतः विषविद्या है। इसमें विष के प्रकार और उपचार के बारे में विस्तृत जानकारी दी गई है। वैसे मुख्य रूप से पूर्वतंत्र में शल्यकर्म (surgery) के विभिन्न प्रकारों और प्रक्रियाओं का विस्तार से वर्णन है। इसमें वह सभी नये शल्यकर्म (operations) भी शामिल हैं जिनका अविष्कार स्वयम् सुश्रुत ने किया था। शल्यचिकित्सा के पश्चात रोगी की पुनःस्थापना (Rehabilitation) का प्रावधान था। एक स्थान पर लिखा है कि विस्पला नाम की स्त्री का पैर दुर्घटना–ग्रस्त हो गया।उसके लिये लोहे का कृत्रिम पैर (artificial limb) लगाया गया जिसके द्वारा वह पुनः चल पाई।

उत्तरतंत्र में चार विशेष वर्गो की चिकित्सा दी है जिसमें शलकतंत्र (नेत्र, कंठ, नासिका, शिर के रोग) कायचिकित्सा (medicine), कौमारभृत्य (diseases of adoloscence), भूतविद्या (psychiatrics) सम्मिलित हैं। उत्तरतंत्र का औरपद्रविका भी कहा गया है क्योंकि इसमें शल्यकर्म से होने वाले विकार (complications) जैसे ज्वर, कफ, पांणुरोग (Jaunduce), कृमिरोग (eplepsy) आदि का उपचार दिया है। वास्तव में, सुश्रुतसंहिता अपने समय की चिकित्सा का सर्वज्ञानसम्पन्न विश्वकोष (encyclopedia) है।

शल्यकर्म में काम आने वाले उपकरण (Surgical Instruments)

सुश्रुत ने अपनी संहिता में 121 शल्यकर्म उपकरणों की सूची दी है। इसमें तरह–तरह के चाकू, छुरिया, कैंची, आरी, पिचकारी (syringes), सूईयां, ॲकुसी (hook), रक्त या अन्य तरल पदार्थ चूसने के यंत्र (sucker), नाल शलाका (catheter) योनि–गुदा वीक्षणयंत्र (vaginal-rectal speclum) आदि शामिल हैं। संहिता में हर एक उपकरण का नाम दिया है। साथ ही यह भी बताया गया है कि कौन सा उपकरण किस धातु का बना हो और शल्यकर्म के बाद किस क्षार (alkali) अथवा अम्ल

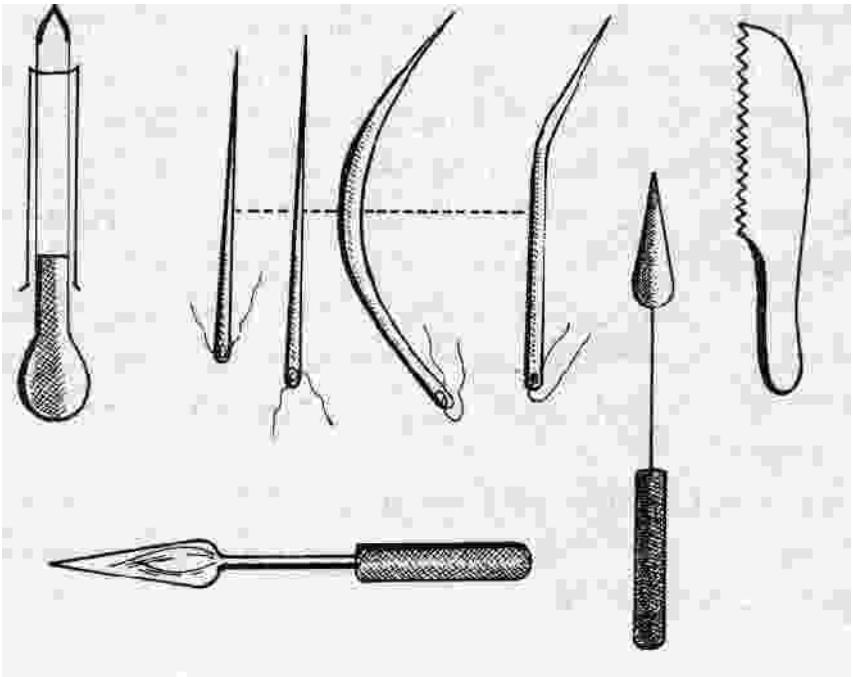

(mild acid) से उसको साफ करना चाहिये। साथ ही संहिता में अच्छे शल्ययंत्रों की परिकल्पना, उनकी गुणवत्ता की परख, उनके बनाने की विधि तथा प्रयोग में लाने के तरीकों के बारे में भी लिखा है। शल्य उपकरणों के बारे में इतनी विस्तृत जानकारी अन्य किसी सर्जन ने शायद ही कभी दी हो।

वास्तव में सुश्रुत का चिंतन अपने समय से कई शताब्दी आगे का था।

अंतरदर्शन यंत्र तथा कुछ पैने यंत्र

उत्तम प्रकार के काटने वाले यंत्र (scalpel) के लक्षण बताते हुए सुश्रुत ने लिखा है, "यह देखने में सुंदर हो, चमकदार (polished) हो, परिमार्जित धातु का बना हो और इतना पैना हो कि एक बाल को उसकी लम्बाई में दो भागों में काट सके।

इस समय यह बताना प्रासंगिक होगा कि पुरातन काल में भारत में धातुविद्या (metallurgy) के क्षेत्र में आद्वितीय सफलतायें प्राप्त की थीं। महाभारत (1000 बी सी) में लौह के बने अनेक प्रकार के यंत्र, कवच और अन्य उपकरण रणभूमि में काम आते थे। राजाओं के आभूषण, सोने के मुकुट, सिंहासन आदि उत्कर्ष कारीगरी के द्योतक थे। सुश्रुत के यंत्र भी उसी विशिष्ट कला के परिणाम थे।

सुश्रुत ने यह भी लिखा है कि शल्यचिकित्सक अपने अनुभव और समझ के अनुसार नये नये यंत्रो का आविष्कार कर सकता है। साथ ही उनका कहना था कि सर्जन का हाथ सबसे श्रेष्ठ यंत्र है, इसके बिना कोई यंत्र काम नहीं कर सकता।

सुश्रुत ने शल्ययंत्रों का नामकरण उनके आकार से मिलते जुलते पशु पक्षियों के नाम पर किया। उदाहरणतः सिहमुखयंत्र, श्वानमुखयंत्र, बकमुखयंत्र, ताकि पहचानने में आसानी रहे। दो–बाहोंवाले यंत्र (various types of forceps) जिनकी बाहें केन्द्रीय धुरी पर चलती थी 'स्वस्तिक यंत्र' कहलाते थे क्योकि इनकी रचना स्वस्तिक–चिन्ह के सदृश्य थी। शंकु आकार का नुकीला यंत्र शंकुयंत्र कहलाता था।

अन्तः दर्शन यंत्र (endoscope)

सुश्रुत संसार के पहले व्यक्ति थे जिसने शरीर के गुह्य अंगों, जैसे गुदा के अन्दर की विकृतियों का निदान करने के यंत्र बनाये। यह विशेष यंत्र भिन्न–भिन्न आकार की गोल नलिका होती हैं जिनसे गुप्त अंकों की आंतरिक स्थिति देख सकते हैं। आजकल इनमें दूरदर्शक यंत्र (दूरबीन) जोड़ कर तथा इन्हें लचकीला बनाकर अनेक प्रकार की ऐन्डॉस्कोपिक सर्जरी सफलतापूर्वक की जा रही है।

सुश्रुतसंहिता में वर्णित सभी उपकरणों का अटठारहवीं शताब्दी तक भारतवर्ष में प्रयोग होता रहा। उसके पश्चात उन्हें विदेशों में ले जाकर, कुछ परिवर्तन करके उनका पाश्चात्यीकरण किया गया। उदाहरणतः स्वस्तिकयंत्र 'स्पैन्सरवैल्स फॉरसैप्स' बन गया, योनि–वीक्षणयंत्र 'सम्स स्पैकुलम' तथा सिंहमुखयंत्र 'लायन जॉ बोन होल्डिंग फॉरसैप्स' कहलाये जाने लगे। आज सुश्रुत के बनाये शल्ययंत्र अपने नाम से नहीं, विदेशी सर्जनों के नाम से जाने जाते हैं।

घाव सीन की सामग्री (Suturing material)

1. वनस्पतियों से प्राप्त तंतु जैसे कमल का डंठल
2. रेशम
3. घोड़े की दुम के बाल
4. चींटों के सर
5. नसों के तंतु

आपदाकाल चिकित्सा के उपकरण

सुश्रुतसंहिता में शरीर के विभिन्न भागों के लिये 14 प्रकार की पट्टिओं (bandages) का वर्णन है। पट्टी करने का अभ्यास मानव शरी के पुतलों पर कराया जाता था। पट्टियों के अतिरिक्त प्लास्टर, स्पिन्ट (खपची), टूरनीके (रक्तबंध) का भी वर्णन है। यह सभी साधन 'उपयंत्र कहलाते थे।

आपदकाल जलन (Emergency burns)

चार प्रकार के जलन का वर्णन है – अग्निदग्ध (Thermal burns), सूर्यदग्ध (sunburn), हिमदग्ध (frostbite) एवम् विद्युत–दग्ध (burns caused by lightening)। सुश्रुत का तर्क था कि दग्ध (burn) किसी प्रकार का क्यों न हो, शारीरिक क्षति सब में एक समान होती है सुश्रुत की इस सोच को सन् 1950 में आधुनिक चिकित्सकों ने सही माना। आज सभी पाठ्य–पुस्तकों में जलन (burns) का यही वर्गीकरण सिखाया जाता है।

रक्तस्राव (haemorrhage) संरोधन

सुश्रुत घाव के दोनों किनारों के लिए निम्न उपाय बतलाये हैं।

1. कटे घाव के दोनों किनारों को पास लाकर (apposition) आपस में जोड़ना।
2. रक्तस्तंभग (styptic) पदार्थ लगाकर रक्तस्राव के स्रोत को बंद करना।
3. रक्तस्राव रोकने के लिए क्षार (alkali) अथवा प्रदाहयंत्र (cauterisation) का प्रयोग।
4. रक्तबन्ध (tourniquet) भुजा या जंघा से नीचे तेज़ी से बहते रक्त को रोकने के लिए रक्तबंध का प्रयोग।

सुश्रुत के बताये उपरोक्त उपाय आधुनिक काल में भी उतने ही सार्थक हैं और आज भी सिखाये जाते हैं।

नये रोगों की पहचान

सुश्रुत पहले चिकित्सक थे जिसने निम्न रोगों को पहचाना और उनके निदान और उपचार के बारे में लिखा (Ref. Encycl. Brit. 2008)

1. उच्चरक्तचाप (hypertension)
2. हृतशूल (angina)
3. मधुमेह (diabetes)
5. कुष्ठ रोग (leprosy)

संवेदनाहरण क्रिया (Anaesthesia)

सुश्रुत इस विषय में भी अग्रगामी थे। उनके द्वारा किये बड़े से बड़े शल्यकर्म वेदनाविहीन होते थे। रोगी सो जाता था पर मूर्च्छित नहीं होता था। लम्बे और गंभीर सर्जरी में भी असह्य कष्ट या पीड़ा का अनुभव नहीं होता था। संवेदनाहरण के लिये सम्मोहिनी का प्रयोग होता था। यह मदिरा, भांग तथा अन्य तत्वों से मिलकर बनती थी। शल्यकर्म के बाद इसका असर दूर करने के लिए 'संजीवनी' का प्रयोग होता था।

सुश्रुत द्वारा आविष्कृत नये शल्यकर्म (Surgical procedures done by Sushruta)

सुश्रुतसंहिता में उन सभी शल्यकर्मो का वर्णन है जिनकी परिकल्पना स्वयम् सुश्रुत ने की और सफलता पाई। मुख्यतः यह हैं,

1. अॅतड़ी के कटे हुए भागों को आपस में जोड़ना (स्वन)।
2. प्रौस्टेट ग्रंथी का निकालना
3. मोतियाबिंद (cataract) की शल्यचिकित्सा।
4. मूत्राशय की पथरी (bladder stone) निकालना
5. उदर चीर कर गर्भाशय से मृत शिशु का निकालना (Caessarian Section)
6. कटी नाक के स्थान पर नयी नाक बनाना (rhinoplaasty)
7. सौंदर्यवादी शल्यतंत्र (plastic surgery) का जन्म

सुश्रुत ने शल्यकर्मकी आठ मौलिक कार्य विधियों का वर्णन किया है।

1. भेदन (incision)
2. छेदन (exision)
3. लेखन (scrapping)
4. व्याधन (draining fluids from abdomen, scrotum etc)
5. ईसन (probing)
6. स्रवन (blood letting)
7. स्वन (apposition of wound margins)

शल्यकर्म का प्रशिक्षण (Training surgical skills)

सुश्रुत संसार के पहले शल्यचिकित्सा–शिक्षक थे, जिन्होंने शल्यक्रिया सिखाने के लिये निर्जीव वस्तुओं का प्रयोग किया ताकि शिक्षार्थी रोगीपर चाकू लगाने से पहले शल्यकर्म की मौलिक क्रियाओं में निपुण हो सकें। भेदन एवम् छेदन के अभ्यास के लिये तरबूज़, लौकी, कमल के डंठल, चिकनी मिट्टी से भरी चमड़े की थैलियों का प्रयोग होता था। लेखन, केश मुंडन और शिरा शल्यचिकित्सा की शिक्षा मृत पशुओं की त्वचा पर दी जाती थी। आरी से अस्थि काटने का अभ्यास पशुओं की हड्डियों पर होता था। ईसन (probing) सीखने के लिये दीमक खाई लकड़ी का उपयोग होता था।

अस्थिरोग चिकित्सा/विकलांग शास्त्र

सुश्रुत ने अस्थि रोगों का विस्तृत वर्णन दिया है। साथ ही स्वास्थ्यलाभ के बाद पुनःस्थापना (rehabilitation) के उपाय भी बतलाये हैं। सुश्रुतसंहिता में छह प्रकार के संधिमुक्त (joint dislocation) और बारह प्रकार के काण्डभग्न (fractures of the shaft) का विस्तारपूर्ण विवरण दिया है। सुश्रुत ने अस्थिभग्न (fracture) चिकित्सा के चार मूल भूत सिद्धांत लिखे हैं जो आज भी अपयुक्त माने जाते हैं।

1. संकर्षण (traction)
2. परिचालन (manipulation)
3. सन्निधान (apposition)
4. स्थायीकरण (stabilisation)

गुदा के रोगों की शल्यचिकित्सा

सुश्रुत ने अर्श (बवासीर) और भगंदर की चिकित्सा के लिये कई कारगर विधियां बताई हैं जिनका उपयोग आज भी हो रहा है। भगंदर के लिए श्रार–सूत्र का प्रयोग एक सरल और सफल उपाय है। संहिता में नासूर–क्षेत्र (fistulous tract) को काटने के लिए विभिन्न शल्य कर्मों का वर्णन है।

मूत्राशय की पथरी निकालने की क्रिया

मूत्राशल में पथरी उस समय भी एक अति सामान्य व्याधि थी। सुश्रुत पहले व्यक्ति थे जिसने शल्यक्रिया द्वारा पथरी निकालने का काम सफलतापूर्वक किया। शवविच्छेदन (dissection) से सुश्रुत को मूत्राशय की शरीररचना (anatomy), पथरियों के प्रकार एवम् निदान के विषय में उचित जानकारी थी। सुश्रुत संहिता में पथरी निकालने की विधि ही नहीं, वरन् उससे होने वाले अपवादों (complications) के बारे में भी लिखा है।

उदरीय शल्यक्रिया (abdominal surgery)

सुश्रुत, संसार के पहले शल्यचिकित्सक थे जिन्होंने उदर चीरकर गर्भाशय से विपदग्रस्त शिशु को सफलतापूर्वक निकाला (गूगल में वर्णित है)। यह शल्यक्रिया आजकल 'सिज़ेरियन ऑपरेशन' के नाम से जानी जाती है। पश्चिमीय देशों में पहला सफल प्रयास सन् 1500 में हुआ। इसके अतिरिक्त संहिता में बंध–गुदोदर (intestinal obstruction) छिद्रोदर (perforated intestine) असस्य–भिन्न (abdominal injuries) के लिये आपादकालीन शल्यकर्मो का प्रायोगिक वर्णन है।

कटी नाक का पुनर्स्थापन (राइनोप्लास्टी)

सुश्रुत के समय पर–स्त्री के साथ व्यभिचार के लिये नाक का काटना वैघ था। जीवनभर कटी नाक लेकर जीने का दंड एक बीभत्स, अमानवीय दुष्कर्म से कम नहीं था।

सुश्रुत के संवेदनशील हृदय और प्रवर्तक बुद्धि ने इस भयावह विकृति को सुधारने के लिये एक नूतन शल्यक्रिया का अविष्कार किया जिसे आजकल राइनोप्लास्टी कहते हैं।

इस शल्यक्रिया के द्वारा माथे की त्वचा का एक भाग, जिसका एक सिरा शरीर से जुड़ा रहता है, उठा कर कटी नाक को फिर से बनाने के काम आता है (चित्र)।

यह 2600 वर्ष पुरानी भारतीय पद्धति बिना किसी परिवर्तन के आज भी कार्यान्वित है। बर्लिन के डा. हिर्शबर्ग ने लिखा है कि यूरोपीय देशों में प्लास्टिक सर्जरी का प्रादुर्भाव भारतीय ज्ञान के द्वारा ही संभव हुआ।

अट्ठारहवीं शताब्दी में ब्रिटेन के कुछ शल्यचिकित्सक 'आदिवासियों (natives) द्वारा की राइनोप्लास्टी देखने के लिए भारत आये थे। सन् 1794 में लंदन लौटने पर उन्होंने अपनी रिपोर्ट 'सिटीज़न्स जर्नल' में छपवाई (चित्र)। इसकी प्रतिलिपि आज भी उपलब्ध है। एक और अंग्रेज, जोसफ कॉन्सटैन्टाइन कारपू ने अपने जीवन के 20 साल भारत में देशज प्लास्टिक सर्जरी सीखने में बिताये। लौटने पर सन् 1815 में उन्होंने यूरोप की प्रथम राइनोप्लास्टी की।

सौंदर्यवादी शल्यचिकित्सा (Plastic Surgery)

चिकित्सा के इस क्षेत्र में आचार्य सुश्रुत अपनी अपूर्व उपलब्धियों के लिए 'फादर ऑफ प्लास्टिक सर्जरी' कहलाते हैं। सुश्रुत ने न केवल प्लास्टिक सर्जरी की आधारशिला रक्खी वरन् कटी नाक का पुनःस्थापन (reconstructive surgery) की विशिष्ट शाखा को जन्म दिया।

सुश्रुत प्लास्टिक सर्जरी के विश्वविख्यात जन्मदाता हैं। उन्होंने इस विशेषता के लिए छह निम्नलिखित मूलभूत सिद्धान्त निर्धारित किये थे।

1. शल्यकर्म से पहले समुचित तैयारी (proper pre-op preparation)
2. सही परियोजना (accuracy of planning)
3. सही और सूक्ष्म शल्यकर्म (precision of action)
4. शल्यकर्म से न्यूनतम हानि

(draining fluids from abdomen, scrotum etc)

5. रक्तस्राव की रोकथाम (haemostasis)
6. परिणाम की परिपूर्णता (perfection of outcome)

सुश्रुत के पुरातन सिद्धान्त आज भी सर्वमान्य हैं और इसी रूप में पढ़ाये जाते हैं।

क्षति से पैदा त्वचा के अभाव को भरने के लिये सुश्रुत ने निम्न युक्तियां ईजाद कीं।

1. त्वचा के विछिन्न भागों को तले से उठाकर जोड़ने के लिये समीप लाना (release of skin for bridging a gap)
2. त्वचा के एक जीभाकार भाग को तले से अलग करके अभाव को भरने के लिए स्थानान्तरित करना (rotation of flap)
3. त्वचा का एक भाग जिसका एक सिरा शरीर से जुड़ा रहता है, उठा कर अभाव के स्थान पर लगाना (pedical graft)

कटी नाक को पुनः बनाने के लिए उपरोक्त पेडीकल ग्राफ्ट का प्रयोग होता है। सुश्रुत की यह शल्यक्रिया प्लास्टिक सर्जरी की पाठ्य–पुस्तकों में इंडियन राइनोप्लाटी के नाम से जानी जाती है।

संहिता में इसका ज्ञान इतना विस्तृत एवम् परिपूर्ण है कि उसने शल्यचिकित्सा को एक नयी विधा दी जिसे 'रिकन्स्ट्रक्टिव सर्जरी' कहते हैं

सुश्रुत की शल्यचिकित्सा–आचारसंहिता

सुश्रुत ने शल्यचिकित्सा में बड़ी सावधानी बरतने के लिए कहा है। शल्यचिकित्सा से पहले उन्होंने सभी स्वास्थ्य समर्थक (promotice) एवम् रोग निरोधक (preventive) उपायों के प्रयोग को महत्वपूर्ण माना है

सुश्रुत का कहना था

1. अज्ञान के कारण या धन के लालच में किया अनुपयुक्त अथवा अनावश्यक शल्यकर्म असहनीय अपराध है।
2. एक कर्तव्यनिष्ठ शल्यचिकित्सक के लिये रोगी का हित सर्वोपरि है।
3. रोग को रोगी के हित से अलग करके देखना अनैतिकता है।
4. असाध्य रोगों की चिकित्सा करने से पहले शल्यचिकित्सक को असफलता की संभावना तथा शल्यकर्म की निरर्थकता के बारे में रोगी और उसके प्रियजनों को सचेत करना चाहिये।

सुश्रुत ने आदर्श शल्यचिकित्सक के निम्न लक्षण बताये हैं।

1. मेधावी हो, कर्मठ हो, संयम से काम करे।
2. चरित्रवान हो, साहसी हो, निष्ठावान् हो।
3. संवाद में निपुण हो।

"जिसमें यह गुण न हों उसे चिकित्सक नहीं बनना चाहिये"।

आचार्य सुश्रुत का कहना था, "परपीड़ा दूर करने से अधिक दिव्य और कोई कर्म नहीं है। उपचार के द्वारा जीवनदान देने से बड़ा कोई धर्म नहीं है।"

सुश्रुत पुरातन भारत के एक महान चिंतक, शोधक, मनस्वी कर्मयोगी, संवेदनशील चिकित्सक और एक अनुपम शिक्षक थे।

समाज की प्रथा के विरूद्ध सुश्रुत ने द्विज शिष्यों के साथ निम्नवर्ग के शिक्षार्थियों को भी शल्यचिकित्सा की शिक्षा दी। शरीर रचना का ज्ञान प्राप्त करने के लिए ब्राह्मणों और धर्माचार्यों की उपेक्षा सहकर शवविच्छेदन (dissection of dead bodies) का साहसपूर्ण कार्य किया। नये–नये रोगों की पहचान की। कई अपूर्व शल्यकर्मो की विधियां बतायी। एक जीवन में इतनी सारी उपलब्धियां एक महामानव ही कर सकता है।

सम्मानी आचार्य, एच. आई. एच. टी. विश्वविद्यालय, देहरादून

पूर्व आचार्य, अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान, नई दिल्ली

दिनेश मणि

समेकित नाशीजीव प्रबंधन

फसलों से अधिक उत्पादन प्राप्त करने हेतु फसल संरक्षण में नाशीजीव रसायनों का प्रयोग बहुत समय से हो रहा है। आरम्भ में ये रसायन बहुत ही प्रभावी सिद्ध हुए, किन्तु विगत कुछ दशकों से प्रभाव क्षमता में कमी आई है तथा इनके अत्यधिक प्रयोग के फलस्वरूप पर्यावरण प्रदूषण की समस्या भी उत्पन्न हो गई हे। पर्यावरण के विभिन्न घटकों यथा-मृदा, जल, वायु, पौधे, जीव जन्तु, दूध, अंडा, मांस तथा अन्य खाद्य पदार्थ आदि सभी में इन रसायनों के अवशेष पाये जा रहे हैं। इन समस्याओं के निराकरण हेतु रसायनों के कम से कम इस्तेमाल पर बल दिया जा रहा है।

रशेल कार्सन ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक– "साइलेण्ट स्प्रिंग" में कीट–नाशकों के बिना सोचे समझे अंधाधुंध प्रयोग के बारे में विस्तार से वर्णन किया है। उन्होंने बताया कि कीटनाशकों का इतनी लापरवाही से प्रयोग किया गया है कि वास्तविक हानिकारक कीटों के अतिरिक्त अन्य जीवों को भी नष्ट कर दिया गया जिसका परिणाम यह हुआ कि कीटों का जैविक नियंत्रण प्रभावित हुआ और कीटों में रासायनिक कीटनाशकों के लिए प्रतिरोध उत्पन्न हो गया, कीट पुनः बड़ी संख्या में उत्पन्न हुए और द्वितीयक हानिकारक कीट उत्पन्न हो गए और पर्यावरण प्रदूषण की समस्या उत्पन्न हो गई।

जीव जगत में पौधभक्षी कीट 26 प्रतिशत एवं शिकारी, परजीवी, परागणकर्मी तथा सफाईकर्मी कीट 31 प्रतिशत हैं। पौधभक्षी अथवा नाशी कीट की केवल 1 प्रतिशत जातियाँ ही क्षति पहुंचाती हैं। विश्व में मात्र 3500 कीटों की जातियाँ नाशीकीट के रूप में पहचानी गई हैं। हमारे देश में कीटों की लगभग 1000 जातियाँ ही फसलों एवं फसल उत्पादन को खेतों में अथवा भण्डारण में क्षति पहुंचाती हैं।

कीटों में वृद्धि एंव विकास हेतु तीन या चार अवस्थाएं पायी जाती हैं। ऐसे कीट जिनमें तीन अवस्थाएं पायी जाती हैं प्रायः निम्फ (शिशु) एवं प्रौढ़ क्षति पहुंचाते हैं लेकिन जिनमें चार अवस्थाएं पायी जाती हैं उनमें प्रायः सूंडी ही फसलों को नुकसान पहुंचाती हैं। प्यूपा इन कीटों में सुषुप्तावस्था में रहती है। प्रौढ़ प्रायः फूलों से पराग एवं मकरन्द ही खाती हैं।

पर्यावरण में कीटों का उन्मूलन भी न हो और न ही कीटनाशकों का अविवेकपूर्ण प्रयोग हो, सके लिए प्रबन्धन की एक विधि का नहीं अपितु अनेक उपायों का समुचित प्रयोग होना चाहिए। यही समेकित कीट प्रबन्धन कहलाता है। इसमें आर्थिक, पारिस्थितिक तथा सामाजिक मूल्यों को ध्यान में रखकर ऐसा प्रबन्धन किया जाता है तथा हानिकारक कीटों की संख्या तथा हानि का स्तर इस प्रकार रखा जाता है कि वह आर्थिक सीमा स्तर से नीचा रहे।

समेकित कीट प्रबंध का प्रादुर्भाव 1950 के दशक में हुआ। सर्व प्रथम बर्टलेट ने 1956 में समेकित नाशी जीव नियंत्रण शब्द का प्रयोग किया जिसमें जैविक

नियंत्रण के साथ–साथ रासायनिक नियंत्रण की दलील दी। इसके पश्चात गियर एवं क्लार्क ने 1961 में सभी उपलब्ध या सम्भव तकनीकों को नाशीकीट नियंत्रण में समेंकित रूप में अपनाने की वकालत की और यह भी कहा कि केवल जैविक व रासायनिक नियन्त्रण पर ही निर्भर न रहा जाय। इन लोगों ने यह भी कहा कि ऐसी विधि जिसकी उपयोगिता दिखाई पड़े उसे प्रयोग कर कीटनाशी की संख्या का प्रबन्ध करना चाहिए। इसके बाद नाशीकीट प्रबन्ध का नाम गियर ने 1970 में दिया।

"समेकित नाशीजीव प्रबन्ध एक बहुआयामी एवं क्रमशः विकासशील तंत्र हैं जिसमें सभी उपयुक्त नियंत्रण युक्तियों, उपलब्ध निगरानीजनक प्रक्रिया एवं सतर्क रहने वाली सूचनाओं को इस तरह से संश्लेषित किया गया हो कि एक उपयुक्त प्रबन्ध कार्यक्रम किसानों को समय–समय पर उपलब्ध कराया जाय जो टिकाऊ फसल उत्पादन तकनीक हो। समेकित नाशीजीव प्रबंधन एक प्रकार से एक रक्तहीन क्रान्ति है जिसमें "जियो एवं जीने दो" का दर्शन ही प्रमुख है। समेकित नाशीजीव प्रबंधन में वानस्पतिक उत्पत्ति वाले रसायन, सूक्षमजीवों द्वारा उत्पन्न रसायन, कृषिगत अथवा पारिस्थितिकीय नियंत्रण, भौतिक एवं यांत्रिक नियंत्रण, पैरोमोन का प्रयोग इत्यादि सम्मिलित हैं।

वानस्पतिक कीटनाशी

वानस्पतिक कीट विष पौधे के सभी भागों जैसे जड़, पत्ती, तना, फूल एवं बीजों से प्राप्त होते है। वर्तमान में समेकित कीट प्रबंधन में वानस्पतिक कीटविषों के प्रयोग पर विशेष बल दिया जा रहा है। इनमें तम्बाकू से प्राप्त निकोटीन, क्राइसेन्थमम के फूलों से प्राप्त पाईरेथ्रम, नीम से प्राप्त ऐजेडीरेक्टिन प्रमुख हैं। प्राकृतिक रूप से उपस्थित पौधों के रसायनों के लिए प्रतिरोध उत्पन्न होना आसान नहीं होता। पौधों से प्राप्त कीटनाशक बिना किसी को क्षति पहुँचाये आसानी से अपने अवयवों में टूट जाते हैं।

जैव नियंत्रण

समेकितकीट प्रबन्धन में सूक्षमजीवों की महत्वपूर्ण भूमिका है। विभिन्न प्रकार के सूक्ष्मजीव–जीवाणु, कवक, विषाणु, प्रोटोजोआ, सूत्रकृमि भूमि में रहने व आसानी से स्थानान्तरण के कारण स्वयं ही कीटों में संक्रामक अवस्था तक रोग फैलाने में समर्थ होते हैं। प्रयोगशालाओं में सूक्षमजीवी कीटनाशकों के बड़ी मात्रा में तैयार करने और रजिस्ट्रेशन की लागत अन्य रासायनिक कीटनाशकों से काफी कम आती है। इनका अन्य अलक्षित (नॉन टारगेट) जीवों पर कम से कम प्रभाव पड़ता है। सूक्ष्मजीवी पैथोजन के लिए कीटों में सामान्यतया प्रतिरोध उत्पन्न नहीं होता है।

प्रकृति में अनेक प्रकार के शिकारी एवं परजीवी कीट पाये जाते हैं। इनकी संख्या में वृद्धि, नाशीजीव संख्या की उपस्थिति एवं वृद्धि पर निर्भर करती है। साथ ही साथ अनेक प्रकार के सूक्ष्म जीवी भी पाए जाते हैं जो नाशी कीटों को रोगी बनाकर मार डालते हैं। इस प्रकार के नियंत्रण को प्राकृतिक नियंत्रण कहते हैं। कभी–कभी प्रकृति नाशीकीटों के पक्ष में हो जाती हैं तभी कीट विस्फोटक स्तर को प्राप्त कर जाते हैं। इनकी संख्या में कमी हेतु मानव हस्तक्षेप आवश्यक है। मानव जब इन जैविक कारकों को पहचानता है, पालता है, इनकी संख्या में वृद्धि करता है, संरक्षित करता है एवं उचित समय में जब नाशी–कीट की उपयुक्त अवस्थाएं पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध हों, वितरित करता है या छोड़ता है तो वह जैविक नियन्त्रण कहलाता है। इसी प्रकार जब किसी फसल के कीट या कीटों को केवल जैविक कारकों से ही प्रबन्धित किया जाता है तो वह सघन जैव आधारित नाशीजीव नियंत्रण अथवा समेकित जैविक नियंत्रण कहलाता है।

परजीवी कीट पोषी कीटों के शरीर के ऊपर अथवा अंदर रहते हैं। इनसे कीट मर भी सकता है। बच भी सकता है। लेकिन एक दूसरी प्रकार का परजीवी है जिसे पैरासिटॉयड कहते हैं। इनके प्रौढ़ स्वतंत्र होते हैं लेकिन अविकसित अवस्थाएं ही परजीवी होती हैं और नीशीकीट कोई भी अवस्था हो, मार डालती है।

ये पैरासिटॉयड कीट जगत के 6 वर्गो जैसे – हाइमनोप्टेरा, हिप्टेरा, कोलियोप्टेरा, लेपिडोप्टेरा, न्यूरोप्टेरा एवं स्ट्रेप्सीप्टेरा के 86 कुलों में पाये जाते हैं। लेकिन जैविक नियंत्रण की दृष्टि से प्रथम दो वर्ग ही अत्यधिक महत्वपूर्ण हैं।

बी.टी. जीवाणु

नाशीकीट के नियंत्रण हेतु आजकल बेसिलस थुरिन्जियेन्सिस नामक जीवाणु का प्रयोग बहुतायत से किया जा रहा है। निजी कंपनियां भी इस कीटनाशी के उत्पादन में सहयोग कर रही हैं। यह जीवाणु डेल्टा एण्डोटॉक्सिन नामक विषैला द्रव्य कीटों के पेट के अन्दर छोड़ता है। फलस्वरूप कीट रोगग्रस्त होकर मर जाता है। रोगग्रस्त सूड़िया सुस्त हो जाती हैं, मुंह से द्रव्य निकालती हैं, बाद में मर जाती हैं। ऐसे रोगग्रस्त सूड़ियों से एकत्रित स्पोर का चूर्ण बनाया जाता है जिनका जीवन 6–12 माह का होता है। भारतीय बाजारों में बायोजेज, हाल्ट एवं डेलपिन जैसे नामों से बी.टी. कीटनाशी लोकप्रिय है। बी. टी. जीवाणु अल्ट्रा वॉयलट प्रकाश से प्रभावित होता है। अतः दोपहर बाद ही इस जीवाणु का कीट नियंत्रण में प्रयोग किया जाना लाभप्रद है। इस जीवाणु से गण लेपिडिप्टेरा की सूँड़ियाँ ही अधिक प्रभावित होती हैं। बी. टी. बीजाणु का एक ग्राम का एक लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव किया जाता है। खेत में इसका प्रयोग एक समान होना चाहिए। ऐसे क्षेत्र जहाँ रेशम कीट पाले जा रहे हों, बी.टी. जीवाणु या प्रयोग नहीं करना चाहिए अन्यथा रेशम कीट की सूड़ियाँ मर सकती है।

न्यूक्लियर पॉलिहेड्रोसिस वायरस (एनपीवी)

एन.पी.वी. विषाणु केवल इंगित कीट को रोगग्रस्त कर नियंत्रित करते हैं। कीटों की सूंड़ी जैसे ही विषाणु से संक्रमित फल, फूल, पत्ती या फली खाती हैं, ये विषाणु सूड़ी के आहार नाल की कोशिकाओं से होती हुई न्यूक्लियस में पहुँचकर अधिक मात्रा में वृद्धि कर जाती हैं। फलस्वरूप संक्रमित सूँड़ी पौधे के ऊपरी भाग पर चढ़कर लटक जाती हैं। सूँड़ी का शरीर गलने लगता है, सुस्त हो जाती है, काली पड़ जाती है। पूरी तरह से संक्रमित सूंडी का शरीर फट जाता है एवं सफेद रंग का विषाणु मिश्रित तरल

पदार्थ बाहर आने लगता है एवं सूंड़ी मर जाती है। विषाणु की संख्या सूक्ष्मदर्शी में देखकर इनकी सान्द्रता का पता करते हैं। हमारे देश में संबंधित एंव विकसित एन.पी.वी. को चना, अरहर, टमाटर, सूरजमुखी, कपास, मूँगफली इत्यादि फसलों में प्रयोग किया जा रहा है।

कृषिगत अथवा पारिस्थितिकीय नियत्रंण

हमारी प्राचीन कृषि पद्वति बहुत ही उपयुक्त एवं पर्यावरण के अनुकूल थी। मौसम में परिवर्तन भी कम देखे जाते थे, लेकिन आज की वैज्ञानिक कृषि प्रणाली कीटों के संवर्धन में अत्यधिक सहायक सिद्ध हुई हैं अतः सभी कृषिगत क्रियाएं फसल हेतु उपयुक्त पारिस्थितिकीय नियंत्रण कहलाता है जबकि कृषिगत प्रबन्ध में वातारण में सोद्देश्य हेरपेर करते हैं जिससे कीटों की संख्या में कमी आती है। कृषिगत उपयों के अन्तर्गत निम्नलिखित बातों का ध्यान रखा जाता है।

1. समय से जुताई, गुड़ाई, बुआई, सिंचाई करना चाहिए साथ ही रासायनिक उर्वरकों का संतुलित उपयोग करना चाहिए।
2. फसलों में पौध से पौध एवं पंक्ति से पंक्ति की दूरी, फसल के अन्दर एवं पड़ोस में उगाई गई फसलें, फसल चक्र एवं फसल के बाद दूसरी फसल का अंतराल, बुवाई अथवा रोपाई के समय को ध्यान में रखकर कीटों की गतिविधियों में कमी की जा सकती है।
3. मिश्रित खेती, पट्टीदार खेती तथा प्रपंच फसलें उगाकर कीटों के प्रकोप में कमी लाई जा सकती हैं।
4. पोटैशियम उर्वरकों के संतुलित उपयोग से कीटों की संख्या में कमी आती है।

प्रतिरोधी पोषक पौधों को उगाना

प्रायः किसी फसल का जहाँ एक पौधा कीटों के प्रति अति संवेदनशील होता है तो वहीं पड़ोसी पौधा कीट प्रतिरोधी हो सकता है। प्रतिरोधी पौधे या तो कीटों द्वारा पसन्द नहीं किये जाते हैं या सहिष्णु होते हैं अथवा कीटों को पोषक आहार नहीं प्राप्त होता है फलस्वरूप उनका आकार एवं विकास प्रभावित होता है। वे सभी पौधे जिनमें कीटों के प्रति कोई भी प्रतिरोधी लक्षण पाया जाय, प्रतिरोधी पोषक पौधा या प्रजाति कहलाती है। प्रत्येक क्षेत्र में प्रतिरोधी प्रजातियों को खेती में उपयुक्त स्थान मिलना चाहिए अन्यथा प्रतियोगी प्रजातियाँ टूट जाती हैं। ऐसा कीटों के बायोटाइप विकसित होने से होता है। भारतवर्ष में भी नाशीकीट प्रतिरोधी प्रजातियां विकसित की गई हैं। धान की प्रतिरोधी प्रजातियां अधिकतर प्रदेशों में विकसित की गई हैं।

यात्रिक एवं भौतिक नियंत्रण

जब कीटों को किसी यन्त्र की सहायता या किसी भौतिक विधि से मारा जाता है तो वह यांत्रिक या भौतिक नियंत्रण कहलाता हे। इसके द्वारा तुरन्त परिणाम प्राप्त होते हैं। इसीतिए किसानों में यह विधि काफी रोचक और लोकप्रिय है। यांत्रिक उपायों में प्रकाश प्रपंच तकनीक अधिक प्रयोग में लाई जाती है। प्रकाश प्रपंच में पेट्रोमैक्स/लालटेन को एक चिपचिपे मोबिल ऑयल से भरे टब में रखकर खेत में रख देते हैं तो रात में निकलने वाले नर व मादा कीट प्रकाश की ओर आकर्षित होते हैं और टब में गिरकर मर जाते हैं।

कीट नियंत्रण के भौतिक उपायों में भौतिक साधनों जैसे ताप, प्रकाश, ध्वनि, बिजली आदि का प्रयोग करके कीटों की संख्या में कमी लाई जाती है।

फेरोमोन का प्रयोग

प्रत्येक कीट जाति का अपना अलग फेरोमोन रसायन होता है। प्रायः मादा कीट एक प्रकार का हार्मोन निकालकर नर कीट को मैथुन हेतु आकर्षित करते हैं। वैज्ञानिकों ने अनेक कीटों के इस व्यवहार को ही केवल नहीं पहचाना बल्कि हार्मोन के रसायन को भी पहचाना है। उन्हीं रसायनों को कृत्रिमरूप से संश्लेषित कर इनके प्रयोग अब नर कीटों को एकत्रित कर क्षेत्र में उनकी उपस्थिति एवं घनत्व को जानने के लिए कर रहे हैं। फेरोमोन रसायन प्रकृति के अनुरूप होते हैं। कीट नियंत्रण की अन्य विधियों से सहिष्णु भी होते हैं। कपास की गुलाबी सूंडी, गन्ने का बेधक कीट, चने की फली का बेधक कीट, तम्बाकू की सूंडी एवं भिण्डी का चितकबरा सूंडी के फेरोमोन का प्रयोग इनकी संख्या आकलन एवं मैथुन में अवरोध हेतु किया जा रहा हैं।

समेकित कीट प्रबन्धन के लिए निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना आवश्यक है।

1. सबसे पहले फसल को क्षति पहुंचाने वाले मुख्य कीटों की पहचान होनी चाहिए।
2. हानिकारक कीटों के परजीवी, पराश्रयी या रोगाणु जीवों तथा इनकी संख्या को प्रभावित करने वाले भोजन एवं जलवायु सम्बन्धी कारकों का ज्ञान आवश्यक है।
3. कीटों की संख्या को प्रभावित करने वाले पर्यावरण के कारकों सर्दी, गर्मी, वर्षा, नमी, धूप आदि तथा फसल की कटाई–बुवाई आदि के समय, पर्यावरणीय परिवर्तनों पर विशेष ध्यान रखा जाय कि वह किस कारक से सबसे अधिक प्रभावित होते हैं।
4. हानिकारक कीट के जीवनवृत्त में दुर्बल अवस्था का ज्ञान आवश्यक है। उसी समय कीट नियंत्रण संबंधी उपाय प्रयोग में लाये जाएं।
5. पारिस्थितिक–तंत्र में उपस्थित जैविक तथा भौतिक कारकों के बीच सामंजस्य बनाये रखना चाहिए।

पर्यावरण में इसके भौतिक और जैविक घटकों के बीच एक निश्चित संतुलन आवश्यक है। इनमें से किसी की भी कमी के कारण यदि यह संतुलन बिगड़ता है तो इसका प्रभाव जीव–जगत के साथ सीधे मनुष्य पर भी पड़ता है। इसलिए पारिस्थितिक संतुलन बनाये रखना आवश्यक है।

एसोशिएट प्रोफेसर,
रसायन विज्ञान, इलाहाबाद

मानव के क्रिया कलाप एवं बाढ की समस्या

दुर्गापद कुइति

साधारणतः वर्षा के समय बाढ़ की समस्या दिखाई देती है। किसी भी कारण से यदि स्थल भाग जल मग्न हो जाय तो उसे बाढ़ अथवा बाढ़ जैसी स्थिति कहा जाता है। खेत में पानी भर जाने से अनाज, फल, शाक-सब्जी आदि की क्षति होती है। निवास स्थानों में पानी के भरने से नालियों की गन्दगी, विभिन्न स्थानों में एकत्र कचरा, सीवर का पानी आदि सब एक साथ मिलकर एक भयावह स्थिति उत्पन्न करती है। तालाब, पोखरा आदि के डूब जाने से मछलियाँ तालाब से बाहर चली जाती हैं। निचले इकालों में पानी भर जाने से जानवरों के लिए चारे की समस्या उत्पन्न हो जाती है। छोटे-छोटे पौंधों के सड़ने-गलने से बदबू तथा मच्छर उत्पन्न होने लगते हैं।

अत्यधिक वर्षा एवं अन्य कारणों से जहाँ बाढ़ की स्थिति उत्पन्न हो जाती है वहीं पानी के कम बरसने से अथवा समय पर उपयुक्त मात्रा में वर्षा के नहीं होने से फसल उत्पादन बुरी तरह प्रभावित होता है। उदाहरण के लिए इस वर्ष (2012) पंजाब की सरकार ने केन्द्र से रूपये 2,380 करोड़ की मांग की है। पंजाब देश के अनाज उत्पादन का लगभग 70 प्रतिशत उत्पादन करता है जबकि उसका भौगोलिक क्षेत्र देश का केवल 1.55 प्रतिशत है।

बाढ़ का प्रभाव मुख्य रूप से वर्षा पर निर्भर है इसलिए बाढ़ के समय का आकलन किये जाने की आवश्यकता है। मौसम में परिवर्तन हो रहा है। वर्षा के समय में भी परिवर्तन हुआ है।

विश्व के इतिहास में बाढ़ का अध्याय नया नहीं है। प्राचीन काल में भी बाढ़ आती रही है। मोहनजोदड़ो की खुदाई से मिली बाढ़ नियत्रंण हेतु संरचनाएँ इसके प्रमाण हैं। अन्य अनेक स्थानों में भी मिले बाढ़ हेतु निर्माण तथा पानी की निकासी की व्यवस्था इसके ठोस प्रमाण हैं।

वर्तमान समय में विश्व में कहीं न कहीं लगभग प्रति वर्ष बाढ़ का प्रभाव देखने को मिलता है। बाढ़ के सम्मिलित अथवा कुल आँकड़ो के अध्ययन से यह पता चला है कि लगभग 1500 व्यक्ति प्रति वर्ष की दर से हानि होती हे। कुल क्षति का भी अनुमान लगाया गया है जो लगभग 250 करोड़ रूपया प्रति मौसम है। इंडियन नेशलन एकेडेमी ऑफ इंजीनियरिंग की रिपोर्ट के अनुसार क्षति के आँकड़ो के अध्ययन से स्पष्ट है कि बढ़ती जनसंख्या एवं जल क्षेत्रों में तथा निचले क्षेत्रों में अतिक्रमण के कारण देश में बाढ़ के प्रभाव की स्थिति और भी बिगड़ी है।

बाढ़ का स्वरूप कई एक प्रकार का हो सकता है।

1. जब पानी आंधी–तूफान के साथ विकराल रूप में स्थल भाग को जल मग्न कर लेता है। यह अल्प समय के लिए होता है।
2. 2–3 दिन यदि अच्छी अच्छी वर्षा होती है तथा पानी उतने तेजी से बहकर नहीं निकल पाता तब पानी एक स्थान पर एकत्र होकर बाढ़ की स्थिति को जन्म देता है। भारत में

ज्यादा तर बाढ़ इसी कारण से होती है।

3. जमकर लगातार अच्छी मात्रा में वर्षा होती है तब पानी बह कर अन्य निचले स्थानों की ओर बढ़ता है। पानी धारने की क्षमता की कमी के कारण नदी–नाले भर कर बाढ़ की स्थिति उत्पन्न हो जाती है।
4. आंधी–तूफान या सुनामी के कारण समुद्र की बढ़ी–बढ़ी लहरें उठने से समुद्र का पानी तटवर्ती क्षेत्र में फैल जाता है एवं बाढ़ जैसी स्थिति बन जाती है।
5. बाँध के टूटने से अथवा बाँध के खतरे के निशान के उपर तक पानी के भर जाने से बाँध से पानी छोड़ा जाता है इस कारण से भी निचले क्षेत्र में जान–माल की हानि होती है।
6. पानी नदियों से होकर समुद्र में जाकर मिलता है परन्तु ज्वार के समय समुद्र का पानी नदी के पानी को रोकता है एवं पीछे की ओर ढकेलता है। परिणाम स्वरूप पानी की मात्रा में वृद्धि हो जाती है एवं नदी में बाढ़ की स्थिति उत्पन्न हो जाती है।

भारत में साधारणतः दक्षिण–पश्चिम अर्थात ग्रीष्म मानसून के दिनों में जो कि जून से सितम्बर माह तक होते हैं अधिकांश भाग में वर्षा होती है। परन्तु दक्षिण भारत में वर्षा मुख्य रूप से उत्तर–पूर्व मानसून अर्थात शीत कालीन मानसून की वर्षा के कारण होती है। भारत में लगभग प्रति वर्ष वर्षा के समय जल स्तर के बढ़ने से नदियों के विभिन्न स्थानों में बने घाट एवं इसके आस–पास बने मन्दिर जल मग्न हो जाते हैं। नदियों का पानी निचले क्षेत्रों एवं किनारे बसे गाँवों में प्रवेश कर जाता है जिससे जन जीवन अस्त–व्यस्त हो जाता है। लोग बेघर हो जाते हैं। उन्हें पुनः स्थापित करना प्रशासन के लिए एक नया बोझ बन जाता है। नदियों में जल के प्रवाह के कारण तटों में कटाव भी होता रहता है। इस प्रकार के तट कटाव को रोकने के लिए अनेक उपाय किये जा रहे हैं। अत्यधिक वर्षा एवं बाढ़ के कारण सड़क, रेल मार्ग क्षति ग्रस्त हो जाते हैं। अतः इस पर विशेष सतर्कता बरती जाती है।

इस वर्ष (2012) उत्तराखण्ड में बाढ़ ने भारी तबाही मचाई है। बादल के फटने से कई जानें गई है। हाल में अलखनन्दा में आई बाढ़ के कारण कई लोग काल कवलित हुये, कई लोग लापता हो चुके गये। सम्पति की हानि के साथ –साथ चौरास पुल टूट गया। भागीरथी नदी भी खतरे के निशान के उपर पहुँच गई। गंगोत्री पुल को भी क्षति पहुँची। भारी वर्षा के कारण मध्य प्रदेश के लगभग 7 गाँव पूरी तरह अथवा आंशिक रूप से बाढ़ से प्रभावित हैं। इस तबाही में फसल एवं भवनों के अतिरिक्त 11 से जयादा लोग अपना जीवन गवाँ चुके है। इस राज्य के अभी भी कई एक जिलों में वर्षा की मात्रा सामान्य से कम है। इस वर्ष अगस्त में लगभग एक सप्ताह तक लगातार वर्षा के कारण जयपुर के निचले इलाकों में स्थित 100 से भी अधिक कॉलोनियों में पानी भर गया। बिजली आपूर्ति व्यवस्था भी गड़बड़ा गयी। इस वर्ष राजस्थान में सामान्य से अधिक वर्षा हुई।

विगत वर्षो में हुये बाढ़ एवं उसके स्थान एवं कारणों के विश्लेषण से यह स्पष्ट है कि बाढ़ की समस्या मुख्य रूप से सिधु गंगा का मैदान एवं उत्तर–पूर्व भारत के क्षेत्र में फैला है। वैसे तो कभी–कभी छोटी–छोटी नदियों में भी बाढ़ आ जाती है। भारत की 17 बड़ी नदियों में ज्यादा बाढ़ आती है। मध्य भारत की नदियों में नर्मदा, महानदी एवं इसकी उपनदियों से बाढ़ आती है।

निदरलैण्ड एवं लीडस् विश्वविद्यालय के एक शोध दल के द्वारा किये गये अध्ययन से यह स्पष्ट हो गया कि लगभग नौ तटीय शहरों को बाढ़ की बिभिषिका का खतरा है। इन शहरों में शंघाई सबसे उपर है एवं कलकत्ता तथा ढाका मध्य में है। कलकत्ता में बाढ़ से नुकसान इसलिए ज्यादा होगा क्योंकि वहाँ एक अच्छी जनसंख्या बसी है।

बाढ़ को रोकने हेतु अनेक बाँध बनाये गये हैं। परन्तु प्रत्येक बाँध में उसकी क्षमता के अनुसार ही पानी रखा जाता है। यदि वर्षा अथवा अन्य कारणों से पानी खतरे के उपर पहुँच जाता है तो बाँध से पानी छोड़ा जाता है। इससे भी नीचले क्षेत्र में बाढ़ आ जाती है। उदाहरण के लिए हिराकुण्ड़ जलाशय से पिछले वर्षो में पानी छोड़ने के कारण उडिसा के कई एक गाँव बाढ़ की चपेट में आ गये थे।

नदी–नाले की पानी धरने की क्षमता का लगातार ह्रास हो रहा है। स्थान–स्थान पर विभिन्न उद्योगों हेतु पानी को रोका गया है। बहने वाले पानी की मात्रा में कमी के कारण घाटी के तल के कटाव में कमी, मिटटी को साथ बहा ले जाने में कमी एवं निक्षेपण में वृद्धि भी जिम्मेदार हे। नदी नालों में इतना अधिक अतिक्रमण हो रहा है कि नदी अपने अस्तित्व के लिए लड़ रही है।

वर्तमान में भारत में लगभग 120 बड़ी तथा मध्यम नदियाँ है जिसे बड़े पैमान में 6 वृहद नदी सिस्टम में रखा गया है। नदी के किनारे को हम बाढ़ रोकने के लिए ऊँचा तो कर देते हैं परन्तु जो छोटे–छोटे नाले नदी से जुड़े हुये हैं उस पर से हमारा ध्यान हट जाता है। पानी इन नालों से आकर शहर तथा बस्ती के अन्दर फैल जाता है। कई एक शहरों में इस प्रकार से नदी का पानी नाले अथवा पाइप लाइन के द्वारा जल बहुत क्षेत्रों में प्रवेश कर जाता है जो लोगों के लिए परेशानी का कारण बन जाता है। नदियों के किनारे बसे शहरों में ऐसी स्थिति देखने को मिलती है।

हिमालय के क्षेत्र में हुए बाढ़ के विस्तृत अध्ययन से बाढ़ के दो मुख्य कारण सामने आते हैं। एक तो घाटियों का ढाल अधिक है, दुसरा मानव द्वारा निर्मित बढ़ते अवरोध। मानव ने अपने निवास तथा मनोरंजन हेतु हिमालय के अनेक स्थानों में प्रकृति के साथ छेड़–छाड़ कर बाढ़ की समस्या में वृद्धि की है। नदी के उद्‌गम स्थल से लेकर रास्ते में वृक्ष तथा वन आच्छादित क्षेत्रों में कमी के कारण सतह पर जल का प्रवाह बढ़ गया है एवं जल जमीन के अन्दर जाने की मात्रा में कमी हुई है।

प्रोफसर,
भू विज्ञान एवं जल संसाधन प्रबंधन,
अध्ययनशाला
प. रविशंकर शुक्ल विश्वविद्यालय, रायपुर

महेश कुमार शर्मा

ॐ

ईश्वर की सत्ता ब्रह्माण्ड के कण-कण में विद्यमान है।

ईश्वरीय कण

हाल ही में जुलाई **2012** में ईश्वरीय कण यानी गॉड पार्टिकल की खोज से विज्ञान भी इस तथ्य की पुष्टि करता दिख रहा है। गॉड पार्टिकल का वैज्ञानिक नाम हिग्स बोसोन है। वैज्ञानिकों का मानना है कि ब्रह्माण्ड के अस्तित्व में आने से पहले सब कुछ हवा में तैर रहा था। किसी वस्तु का कोई तय आकार या वजन नहीं था। तभी ईश्वरीय कण भारी ऊर्जा लेकर आया और सभी तत्व आपस में जुड़ने लगे। वैज्ञानिक कहते हैं कि हिग्स बोसोन की मौजूदगी ने ही पदार्थ के कणों में वजन पैदा किया। इसके बाद ही **13.7** अरब वर्ष पहले सृष्टि की उत्पत्ति, आकाशगंगाओं, ग्रहों और तारों का निर्माण संभव हो पाया।

विभिन्न धर्मो में लोगों की आस्था है कि ईश्वर ने इस सृष्टि की रचना की हें ईश्वर ने इस संसार को बांधा हुआ है और वही इसे संचालित कर रहा है। आस्तिकता व ईश्वर में अटूट विश्वास के आधार पर लोग जीवन में हर क्षण परमेश्वर की उपस्थिति महसूस करते हैं परन्तु ऐसा मानना है कि ईश्वर को किसी ने देखा नहीं है। ठीक इसी प्रकार वैज्ञानिक मान रहे हैं कि गॉड पार्टिकल संसार के बनने व चलने का आधार है। इस कण ने ब्रह्माण्ड के हजारों कणों और पदार्थो को बांध रखा है, मगर आज तक इसे किसी ने देखा नहीं है। माना जा रहा है कि इस ब्रह्म कण के दिखते ही दिखने लगेगी सृष्टि के बनने व चलने की कहानी। हल हो जायेंगी जीवन और ब्रह्मण्ड की कई अनसुलझी गुत्थियां।

गॉड पार्टिकल नाम नोबेल पुरस्कार विजेता भौतिक शास्त्री लियॉन लेडरमैन ने दिया है। इसीलिए इस खोज को लेकर इतना उत्साह और रोमांच है और ऐसा प्रचलित हो गया है कि लोग यह मानने लगे हैं कि इस कण का ईश्वर से कुछ सम्बन्ध है। हिग्स बोसोन नाम दो प्रसिद्ध भौतिक वैज्ञानिकों, जेनेवा में रहने वाले 83 वर्षीय ब्रिटिश विज्ञानी पीटर वेयर हिग्स और भारतीय विज्ञानी (स्व.) सत्येन्द्र नाथ बोस के नामों पर रखा गया है।

हिग्स बोसोन कण की खोज के लिये स्विट्जरलैंड के जेनेवा शहर के नजदीक सेंटर फॉर यूरोपियन रिसर्च इन न्यूक्लियर फिजिक्स (सर्न) में फ्रांस और स्विट्जरलैंड की सीमा पर 28 किलोमीटर लंबी एक सुरंग जमीन के 300 मीटर नीचे बनाई गई है, जिसमें अब तक की सबसे मंहगी मशीन लार्ज हैड्रन कोलाइडर (एल.एच.सी.) बेहद शक्तिशाली चुंबक, डिटेक्टर और अन्य संयंत्र लगाये गये हैं। इस अन्वेषण के लिये बहुत कठिन व जटिल प्रक्रिया में इस महामशीन में शून्य से भी 272.55 डिग्री सेल्सियस कम तापमान पर एक लाख करोड़ प्रोटॉन (या हेड्रॉन–हेड्रॉन) की टक्कर कराई गई। इस टक्र से एक लाख परमाणु बम के विस्फोट कराने के बराबर अपार ऊर्जा उत्पन्न हुई और तब हिग्स बोसोन कण का जनन हुआ। इस पूरी प्रक्रिया को काबू में रखने के लिये तापमान, वोल्टेज, इलेक्ट्रिक फील्ड और गैग्नेटिक फील्ड आदि पैरामीटर नियंत्रित किये गये। इस अनुसंधान में 10 अरब डॉलर से ज्यादा खर्च हो चुके हैं। भारत समेत सारे विश्व के अनेक संस्थानों के 6000 से भी अधिक वैज्ञानिक इस शोध में जुडे हैं।

विज्ञान के इस विशाल, महत्वाकांक्षी व महाप्रयोग द्वारा बह्माण्ड की उत्पत्ति के समय के विज्ञान द्वारा प्रतिपादित बिग बैंग (महाविस्फोट) जैसी परिस्थितियां बनाई गईं जिसमें अतिशय ऊर्जा और विभिन्न कणों का उतसर्जन हुआ। ब्रह्माण्ड की संरचना और निर्माण में प्रयुक्त कणों की प्रकृति के अध्ययन के लिये "बिग बैंग थ्योरी" प्रतिपादित की गई है। इस सिद्धान्त के अनुसार ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति एक महाविस्फोट (बिग बैंग) से हुई। प्रारम्भ में ब्रह्माण्ड बहुत ज्यादा गर्म था, बाद में धीरे–धीरे यह ठंडा होता गया। इस महाविस्फोट के साथ उत्पन्न असीम ऊर्जा, पदार्थ एवं उनकी संरचना मे ंप्रयुक्त कणों तथा उनके मध्य अलग–अलग परिस्थितियों में लगने वाले बलों का अध्ययन आधुनिक कण भौतिकी का केन्द्र बिन्दु है। इन कणों के द्रव्यमान के लिये जिम्मेदार कण को हिग्स बोसोन (या ईश्वरीय कण) के नाम से जाना जाता है।

यह सच है कि हिग्स बोसोन कण की खोज ब्रह्माण्ड में पदार्थ की संरचना एवं उनके बीच लगने वाले विभिन्न बलों की आधुनिक परिकल्पना को आने वाले समय में और समृद्ध करेगी तथा ब्रह्माण्ड के अन्य अनसुलझे रहस्यों को हल करने में भी मदद करेगी।

ईश्वरीय अवधारणा में तीन तत्व हैं – आकार, उकार और मकार यानी अ, उ और म्, तीन अक्षर और इन तीनों अक्षरों के समुदाय से मिलकर परमात्मा का निज नाम "ओम्" बन जाता है। सृष्टि में ये तीनों तत्व ईश्वर, जीव और प्रकृति का अलग–अलग बोध कराते हैं। सन् 2008 में रूस के प्रसिद्ध भौतिक विज्ञानी जी. बी. डालिबो डब्राल्स्की ने पता लगाया कि ब्रहमाण्ड के बनने के समय जो बिग बैंग (महाविस्फोट) हुआ था, उसमें जो महाध्वनि निकली थी, वह ओम् शब्द की ध्वनि के महानाद के समान है। इसे वैदिक भाषा में प्रणव व्याहृति या मूल ध्वनि भी कहते हैं। डब्रल्स्की का मानना है कि बिग बैंग के समय की ध्वनि अब भी सृष्टि के वातावरण में गूंज रही है। उन्होंने अपने प्रयोगों के जरिये जांच पड़ताल में पया कि एक निश्चित फ्रीक्वेंसी की ध्वनि तरंगें वातावरण में विद्यमान हैं जो मनुष्य के शरीर और मन के स्वास्थ्य को ही नहीं, ऊर्जा को भी प्रभावित करती हैं। ये ध्वनि तरंगें मनुष्य की बीमारियों के लिये उपचारक सिद्ध हुई हैं। डब्राल्स्की का कहना है कि ये ध्वनि तरंगें ओउम् मंत्र के जप और उच्चारण से उत्पन्न ध्वनि तरंगों से मिलती जुलती हैं।

ओउम् के वैज्ञानिक आधार को सुस्पष्ट करते हुए यह सिद्ध किया गया है कि ओम् का शुद्ध और विविधत् उच्चारण करने से ही प्राणायाम और योग के माध्यम से मानव अधिकतम लाभ प्राप्त कर सकता है। इसके अर्थ समझकर सही जप से ही मन के साथ–साथ तन की भी शुद्धि होती है।

इस सम्बन्ध में हाल ही में ब्रिटेन के एक साइन्स जर्नल ने ओउम् के जप के वैज्ञानिक प्रभाव के शोघ के परिणाम बताये हैं। रिसर्ज एंड इंस्टिट्यूट ऑफ न्यूरो साइन्स के प्रमुख प्रो. जे. मॉर्गन और उनके सहयोगियों ने सात वर्षों तक हिन्दू धर्म के इस पवित्र व प्रतीक चिन्ह ऊँ के हृदय की विभिन्न बीमारियों से पीड़ित 2,500 पुरुषों और 2,000 महिलाओं का परीक्षण किया। इन सारे मरीजों को केवल वे ही दवाईयाँ दी गईं जो उनके जीवन बचाने के लिये आवश्यक थीं। शेष सब बन्द कर दी गईं।

रोज सुबह 6 से 7 बजे तक, एक घंटा, इन रोगियों को साफ, स्वच्छ और खुले वातावरण में योग्य शिक्षकों द्वारा ओउम् बीज मंत्र का जप, इसके अर्थ समझाकर कराया गया। इन दिनों इस बात का ध्यान रखा गया कि उन्हें विभिन्न ध्वनियों और आवृत्तियों में ऊँ का जप कराया जाये। हर तीन माह में न केवल हृदय और मस्तिष्क का वरन् उनके पूरे शरीर का स्कैन कराया गया। चार साल तक ऐसा करने के बाद जो रिपोर्ट सामने आई, वह आश्चर्यजनक थी।

70 प्रतिशत पुरुषों और 82 प्रतिशत महिलाओं में ओम् का जप शुरू करने से पहले बीमारियों की जो स्थिति थी, उसमें 90 प्रतिशत तक की कमी दर्ज की गई । कुछ लोगों पर मात्र 10 प्रतिशत ही असर हुआ। इसका कारण प्रो. मार्गन ने यह बताया कि उनकी बीमारियां अन्तिम चरणों में पहुंच चुकीं थी।

इस प्रयोग से यह परिणाम भी प्राप्त हुआ कि नशे, शराब, धूम्रपान, तम्बाकू आदि से मुक्ति भी ओम् के जप से प्राप्त की जा सकती है। इसका लाभ उठाकर जीवन भर स्वस्थ रहा जा सकता है।

जप से कैसे हुआ यह लाभ? इस विषय पर प्रो. मॉर्गन कहते हैं कि ओउम् के जप के समय, विभिन्न आवृत्तियों और ध्वनियों के उतार–चढ़ाव से पैदा होने वाली कम्पन क्रिया से मृत कोशिकाओं का पुनर्निर्माण हो जाता है। रक्त विकार होने नहीं पाते। खराब कोशिकाएं नष्ट हो जाती हैं और अच्छी कोशिकाओं की नुनर्जीनन तथा स्वस्थ होकर बढ़ोतरी होती है। खून में गन्दगी दूर होती है और ऊर्जा तथा स्फूर्ति बनी रहती है। इस प्रकार रोगी स्वास्थ्य लाभ प्राप्त करता है।

निःसंदेह सृष्टि के बारे में सब कुछ जानने की दिशा में हिग्स बोसोन (ब्रह्म कण) की खोज एक बहुत बड़ी सफलता है और भविष्य में यह अवश्य मील का पत्थर साबित होगी। आने वाले समय में वैज्ञानिक भार और गुरुत्वाकर्षण बल उत्पन्न होने के कारणों तथा सृष्टि की रचना के अनसुलझे गूढ़ तथ्यों से पर्दा उठाने में सफल हो सकते हैं। लेकिन ब्रह्माण्ड की संरचना कैसे हुई, कब हुई, कैसे सूरज, तारे, चांद, पृथ्वी और अन्य ग्रह बने? इन सबके बारे में वैज्ञानिक दृष्टिकोण अभी भी काफी हद तक अंधेरे में है। जिस प्रकार से हिग्स बोसोन (ईश्वरीय कण) के अन्वेषण को भगवान् की सत्ता को खोज लेने जैसे अलंकृत दावे किये जा रहे हैं, कदाचित वे सही नहीं है।

वैदिक विचार–धारा के अनुसार परमेश्वर निराकार, सर्वशक्तिमान और सर्वव्यापक है और उसी ने सृष्टि की उत्पत्ति की है तथा श्रेत्रवाद के आधार पर यह जगत् तीन अनादि तत्वों ईश्वर, जीव और प्रकृति से विभूषित है। महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती के ग्रन्थ ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका में लिखी गणना के आधार पर वर्ष 2012, विक्रम संवत् 2069 में इस सृष्टि की उत्पत्ति को एक अरब छियानवे करोड़ आठ लाख त्रेपन हजार एक सौ बारह (1,96,08,53,112) वर्ष हो चुके हैं। यह सातवां वैवस्वत मन्वन्तर वर्तमान है। इसके भाग में यह अट्ठाईसवां (28 वां) कलियुग है। छः मन्वन्तर पहले हो गये हैं, सात मन्वन्तर और होंगे। दो अरब तैंतीस करोड़ बत्तीस लाख छब्बीस हजार आठ सौ अट्ठासी (2,33,32,26,888) वर्ष सृष्टि के भोग के शेष हैं।

संयुक्त निदेशक (से.नि.), आई.आर.डी.ई.
देहरादून

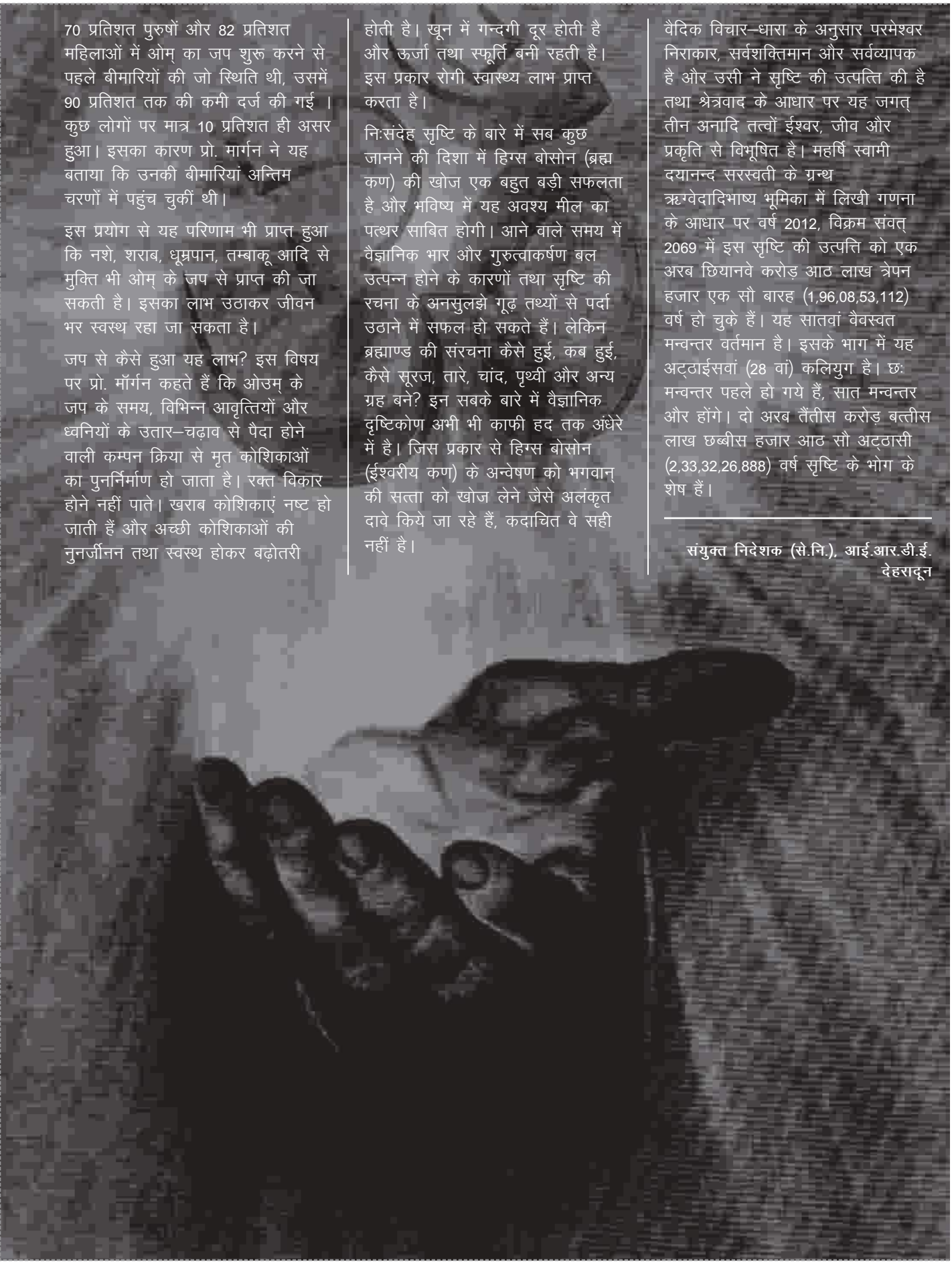

हाथियों को रौंदती रेलगाड़ियाँ

दिनेश चन्द्र शर्मा

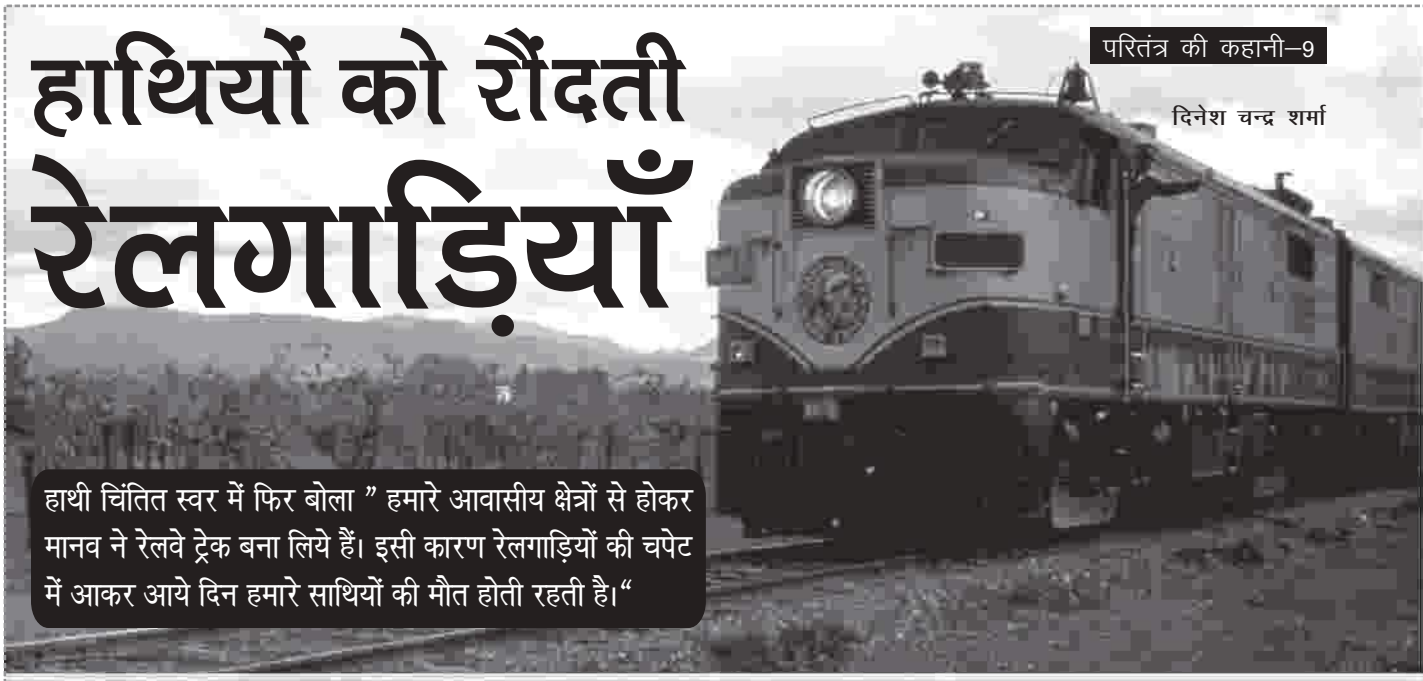

हाथी चिंतित स्वर में फिर बोला " हमारे आवासीय क्षेत्रों से होकर मानव ने रेलवे ट्रेक बना लिये हैं। इसी कारण रेलगाड़ियों की चपेट में आकर आये दिन हमारे साथियों की मौत होती रहती है।"

हिरण ने भी उसकी बात का समर्थन किया, "हाथी दादा, सिंतबर – 2010 में पश्चिम बंगाल के जलपाईगुड़ी में तो तेज रफ्तार मालगाड़ी चपेट में आकर एक साथ सात हाथियों की मौत हो गयी थी।"

हाथी दुखी स्वर में बोला, "हाँ हिरण भइया, वह वास्तव में एक हृदय विदारक घटना थी, उस समय हाथियों का एक झुण्ड रेलवे ट्रेक पार कर रहा था, तभी मालगाड़ी ने उन्हें टक्कर मारी थी। अब बतलाइये कि हम लोग क्या करें? अरे भई, जब हमारे आवासीय क्षेत्रों के बीच से होकर रेलवे ट्रेक या सड़कें बनाओगे तो हमें अपनी जरूरतों के लिए उन्हें पार तो करना ही पड़ेगा। इसलिए मानव का दायित्व है कि वह ऐसे क्षेत्रों में रेलगाड़ियों या अन्य वाहनों की गति धीमी रखे, लेकिन ऐसा हो कहाँ रहा है, मानव तो हमारे क्षेत्रों में भी अपने वाहनों की गति को कम करने को तैयार नहीं है।

शावक ने भी अपनी राय दी, "दादा यदि मानव को हमारे आवासीय क्षेत्रों से गुजरना भी है तो उसे ऐसे प्रयास तो करने ही चाहिए कि हमारा स्वाभाविक जीवन प्रभावित न हो।"

हिरण ने भी आक्रोशित स्वर में कहा, "अरे बेटा मानव ने तो इस विषय में चिंता करने की कभी आवश्यकता ही नहीं समझी, वह तो हमारे क्षेत्रों से भी खूब शोर–शराबा करते हुए, तेज हॉर्न बजाते हुए और तेज रफ्तार से अपने वाहनों को दौड़ाते हुए ले जाता है और यह जरा भी चिंता नहीं करता कि उसकी इन हरकतों का हमारे ऊपर क्या प्रभाव पड़ेगा।"

हाथी ने चिंतित होते हुए कहा, "खेद की बात तो यह है कि बार–बार हादसे होने के बाद भी वह अपने व्यवहार में सुधार नहीं कर रहा है और हादसे दर हादसे होते ही जा रहे है।

अरे भाई, अक्टूबर 2007 में राजाजी नेशनल पॉर्क हरिद्वार में हथिनी अंरूधती की ट्रेन से टकराने से मृत्यु हुई, इसके एक माह बाद ही जलपाईगुड़ी में भी इसी तरह एक हाथी मरा। फरवरी 2008 में कोयंबटूर से 20 किमी.. दूर पथनौर के पास भी ट्रेन से टकराकर एक हाथी मरा और उसके एक सप्ताह बाद ही राजाजी नेशलन पार्क में फिर एक गर्भवती हथिनी की ट्रेन की टक्कर से मौत हुई, जबकि इसी वर्ष जुलाई में जलपाईगुड़ी में महानंदा वाइल्ड लाइफ एरिया में भी ट्रेन की टक्कर से एक हाथी मरा और जैसा कि अभी तुमने बताया था – सितुंबर 2010 में सात हाथी मरे हैं .... यह सब क्या हो रहा है हमें रेलगाड़ियों से क्यों कुचला जा रहा है...।"

हाथी का चेहरा क्रोध, दुख और चिंता से तमतमा गया। गला रूंध गय। वह इसके आगे कुछ नहीं बोल पाया। हिरण और उसका शावक भी दुःख और चिंता में चुपचाप बैठे रहे।

कुछ देर बाद हाथी ने मौन तोडा, "अफसोस की बात तो यह है कि ऐसी घटनाओं से भयभीत होकर, घबराकर या फिर आक्रोशित होकर यदि हम अपना रास्ता बदलते हैं, अपने आवासीय क्षेत्रों से भटकते हैं या फिर कोई अस्वाभाविक व्यवहार करते हैं तो इसके लिए हमें ही दोषी ठहराया जाता है। अरे भई, हम तो अपने व्यवहार को संयत करने का पूरा प्रयास करते हैं लेकिन जब हमारे ऊपर अत्याचार पर अत्याचार होते ही जायेंगे तो फिर हमारे व्यवहार में थोड़ी बहुत अस्वाभाविकता तो आ ही जायेगी... फिर क्या होता है? हमें नियंत्रित करने के नाम पर हमारे ऊपर और अत्याचार किये जाते हैं।

"आप ठीक कह रहे हो दादा, आपके भाइयों पर तो अक्सर यह आरोप लगाये जाते हैं कि वे अमुक क्षेत्र में उत्पात मचा रहे हैं। "हिरण ने बात को आगे बढाया।

हाथी ने कुछ सोचते हुए कहा, "हाँ हिरण भइया हमारी परिस्थितियों या परेशानियों को तो मानव समझने को तैयार ही नही हैं और हमें दोषी ठहराने में लगा रहता है। लो मै तुम्हें ऐसी ही कुछ घटनाये सुनाता हुँ, ध्यान से सुनो...।"

हिरण और उसका शावक हाथी की बात सुनने लिए सजग होकर बैठ गये।

राष्ट्रीय बाल विज्ञान कांग्रेस की राज्य स्तरीय अभिमुखीकरण कार्यशाला संपन्न

राष्ट्रीय बाल विज्ञान कांग्रेस की राज्य स्तरीय अभिमुखीकरण कार्यशाला संपन्न

राष्ट्रीय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संचार परिषद् (विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग), भारत सरकार नई दिल्ली द्वारा उत्प्रेरित एवं एन0सी0एस0टी0सी0 नेटवर्क द्वारा समन्वित राष्ट्रीय कार्यक्रम ''राष्ट्रीय बाल विज्ञान कांग्रेस'' की राज्य स्तरीय अभिमुखीकरण कार्यशाला का आयोजन दिनाँक 06–07 जुलाई 2012 को आम्रपाली इन्सटीट्यूट, लामाचौड़, हल्द्वानी में किया गया। कार्यशाला में उत्तराखण्ड राज्य के 13 जनपदों के जिला समन्वयकों, अकादमिक समन्वयकों, डायट के सन्दर्भ शिक्षकों, एस0सी0ई0आर0टी0 के प्रतिनिधि, विभिन्न जनपदों के नामित सन्दर्भ शिक्षकों सहित राज्य आयोजन समिति एवं राज्य अकादमिक समिति के पदाधिकारियों सहित 65 लोगों ने प्रतिभाग किया। कार्यशाला का समन्वयन राज्य की समन्वयक संस्था ''पीपुल्स एसोशिएशन ऑफ हिल एरिया लॉन्चर्स (पहल)'' द्वारा किया गया।

कार्यशाला का शुभारम्भ पारस्परिक परिचय के उपरान्त राज्य आयोजन समिति के अध्यक्ष प्रो0 आर0सी0 पाण्डे एवं राज्य अकादमिक समिति के अध्यक्ष श्री जी0के0 शर्मा द्वारा संयुक्त रूप से किया गया। कार्यशाला के उद्घाटन समारोह में राज्य समन्वयक संस्था ''पीपुल्स एसोशिएशन ऑफ हिल एरिया लॉन्चर्स (पहल)'' की अध्यक्ष एवं से0नि0 उप निदेशक (शिक्षा) श्रीमती कमला पन्त ने समस्त आगन्तुकों का स्वागत किया। श्रीमती पन्त ने कहा कि संस्था विद्यार्थियों में वैज्ञानिक सोच विकसित करने के उद्देश्य से एक मिशन के रूप में समर्पित है। उद्घाटन सत्र में अपने आधार वक्तव्य में राष्ट्रीय बाल विज्ञान कांग्रेस के राज्य समन्वयक डॉ0 अशोक कुमार पन्त ने राष्ट्रीय बाल विज्ञान कांग्रेस के इतिहास, एन0सी0एस0टी0सी0 नेटवर्क एवं उत्तराखण्ड राज्य में इस कार्यक्रम की समीक्षा करते हुए विस्तार से प्रकाश डाला। डा0 पन्त ने बताया कि वर्ष 1993 में ग्वालियर से एक छोटे से प्रयास से शुरू हुई यह गतिविधि अपने 20वें सोपान पर पहुँच गई है। जिसकी व्यापकता एवं लोकप्रियता से अब यह धीरे–धीरे अन्तर्राष्ट्रीय स्वरूप ले रही है। उन्होंने बताया कि यह बच्चों के लिए आयोजित होने वाली विश्व की सबसे बड़ी वैज्ञानिक गतिविधि है जिसमें 10–17 वर्ष के बच्चों को अपनी वैज्ञानिक प्रतिभा प्रदर्शित करने के साथ–साथ वैज्ञानिक सोच और सत्य के निकटतम पहुचने के संस्कार विकसित करने के अवसर प्राप्त होते हैं। डा0 पन्त ने बताया कि राष्ट्रीय पाठ्यचर्या रूपरेखा 2005 (एन0सी0एफ0 2005) की एक्जक्यूटिव समरी में भी इस बात का स्पष्ट उल्लेख है कि विद्यार्थियों को बाल विज्ञान कांग्रेस की तर्ज पर प्रोजक्ट तैयार करवाये जाऐं ताकि वह परिवेश के प्रति संवेदनशील हो कर कार्य कर सके। उन्होंने बताया कि उत्तराखण्ड राज्य में राज्य गठन से ही यह गतिविधि व्यापक तौर पर आयोजित की जा रही है तथा पहल संस्था, यूकॉस्ट एवं विद्यालयी शिक्षा विभाग तीनों के संयुक्त तत्वावधान में राज्य के बाल वैज्ञानिक राष्ट्रीय स्तर पर प्रतिवर्ष अपनी प्रतिभा का प्रदर्शन कर रहे हैं। उन्होंने इस हेतु जहाँ शिक्षा विभाग एवं यूकॉस्ट का आभार व्यक्त किया वहीं इस गतिविधि से जुड़े जिला समन्वयकों अकादमिक समन्वयकों, प्रधानाचार्यों तथा मार्गदर्शक शिक्षकों के प्रति भी आभार व्यक्त करते हुये कहा कि उन्हीं के प्रयासों से उत्तराखण्ड में यह गतिविधि राष्ट्रीय स्तर पर एक विशिष्ट पहचान बना चुकी है। डा0 पन्त ने उपस्थित प्रतिभागियों को इस गतिविधि के प्रति अभिप्रेरित किया तथा कहा कि हम सभी शिक्षा जैसे पुनीत दायित्व से जुड़े हैं अतः हमें विद्यार्थी और देश के हित में उनमें वैज्ञानिक सोच विकसित करने के प्रयास करने ही चाहिये ताकि शिक्षा को जमीन से जोड़ते हुए मात्र सूचना तंत्र से हटाकर 'ज्ञान' की ओर उन्मुख किया जाए जो कि शिक्षा की सच्ची अवधारणा है तथा संविधान में भी इसकी अपेक्षा की गयी है। डा0 पन्त ने आशा व्यक्त की कि संख्यात्मक रूप में जहाँ राज्य में विद्यार्थियों की संख्या संतोषप्रद है वहीं अभी बाल वैज्ञानिकों द्वारा तैयार की जाने वाली शोध परियोजनाओं में गुण्वत्ता की ओर ध्यान दिया जाना आवश्यक है। राज्य अकादमिक समिति के अध्यक्ष श्री जी0के0 शर्मा से0नि0 वैज्ञानिक आई0आर0डी0ई0 (डी0आर0डी0ओ0) ने अपने सम्बोधन में कहा कि राष्ट्रीय बाल विज्ञान कांग्रेस निश्चित तौर पर एक ऐसी महत्वपूर्ण गतिविधि है जो विद्यार्थियों में वैज्ञानिक अभिरूचि एवं वैज्ञानिक शोध प्रवत्ति के संस्कार डालती है। शिक्षकों का दायित्व है कि बच्चों में इस सृजनात्मक गतिविधि को तराशने हेतु एक कुशल मार्गदर्शक शिक्षक की भूमिका का निर्वहन करे। श्री शर्मा ने गत वर्षों के अनुभवों की समीक्षा करते हुए प्रोजेक्ट्स में गुणवत्ता के प्रभावी प्रयासों की अपेक्षा की तथा आशा व्यक्त की कि बीसवीं राष्ट्रीय बाल विज्ञान कांग्रेस में राज्य उत्कृष्ट स्थान पर रहेगा। श्री शर्मा ने डायट एवं एन0सी0ई0आर0टी0 के इस गतिविधि से

जुडने पर प्रसन्नता व्यक्त की तथा आशा व्यक्त की कि अब डायट के माध्यम से भी गतिविधि को अकादमिक सहयोग प्राप्त होगा।

समारोह को सम्बोधित करते हुए राज्य आयोजन समिति के अध्यक्ष प्रो0 आर0सी0 पाण्डे (से0नि0 विभागाध्यक्ष, भौतिक विज्ञान विभाग)रा0स्ना0 महा0 वि0 पिथौरागढ़ ने सभी प्रतिभागियों का स्वागत किया तथा आशा व्यक्त की कि विज्ञान की इस महत्वपूर्ण गतिविधि में डायट एवं एन0सी0ई0आर0टी0 के जुड़ जाने से अब अकादमिक रूप से बाल वैज्ञानिकों को प्रभावी सहयोग प्राप्त होगा। प्रो0 पाण्डे ने कहा कि उत्तराखण्ड राज्य भारत का ऐसा प्रथम राज्य है जहाँ ब्लॉक स्तरीय बाल विज्ञान कांग्रेस का आयोजन कर राज्य की विषम भौगोलिक परिस्थितियों के बावजूद भी बाल वैज्ञानिकों को अपनी वैज्ञानिक प्रतिभा प्रदर्शन के अवसर प्राप्त हो रहे हैं। इस प्रयास को राष्ट्रीय स्तर पर भी सराहा गया है। प्रो0 पाण्डे ने संरचनात्मक ढ़ाँचे में इस वर्ष किये गए आंशिक परिवर्तनों पर प्रकाश डालते हुए अपेक्षा की कि नए नामित जिला समन्वयकों द्वारा और अधिक प्रभावी प्रयास किया जाएगा। प्रो0 पाण्डे द्वारा समन्वयकों को और अधिक प्रभावशाली बनाने हेतु इस वर्ष से मण्डलीय समन्वयकों के नामों की घोषणा की गई डॉ0 एस0एस0 मेहरा को गढ़वाल तथा सुश्री रेखा त्रिवेदी को कुमायूँ मण्डल का समन्वयक नामित करते हुए यह आशा व्यक्त की कि अब यह गतिविधि और अधिक प्रभावशाली होगी। बीसवीं राष्ट्रीय बाल विज्ञान कांग्रेस में गुणवत्ता पर ध्यान देने की अपेक्षा की साथ ही प्रो0 पाण्डे ने अपनी ओजस्वी शैली में सभी प्रतिभागियों में नव ऊर्जा का संचार किया।

प्रथम तकनीकी सत्र में राज्य समन्वयक डॉ0 अशोक कुमार पन्त द्वारा रा0बा0वि0कां0 के मुख्य विषय ''ऊर्जाः सम्भावना, उपयोग एवं संरक्षण (Energy: Explore, Harness and Conserve) प्रतिभागियों के सम्मुख रखा गया तथा मुख्य विषय के अन्तर्गत उपविषयों 1. ऊर्जा संसाधन (Energy Resources) 2. ऊर्जा तंत्र (Energy System) 3. ऊर्जा एवं समाज (Energy and Society) 4. ऊर्जा एवं पर्यावरण (Energy and Environment) 5. ऊर्जा प्रबन्धन एवं संरक्षण (Energy Management and Conservation) 6. ऊर्जा नियोजन तथा मॉडलिंग (Energy Planning and Modeling) से भी प्रतिभागियों को अवगत कराया गया।

मुख्य विषय पर प्रकाश डालते हुए विशेषज्ञ के रूप में श्री जी0के0 शर्मा द्वारा ऊर्जा पर अपना आधार वक्तव्य देते हुए मुख्य विषय को परिभाषित कर उपविषयों की व्याख्या की गई। श्री शर्मा ने कहा कि वर्तमान में विश्व में वही राष्ट्र सबसे शक्तिशाली है जिसके पास ऊर्जा संसाधनों की पर्याप्तता है। भारतवर्ष में अपनी आवश्यकता की तुलना में उपलब्धता अत्यन्त न्यून है जिस ओर प्रयास किये जाने आपेक्षित हैं। उन्होंने नवीनीकृत एवं गैर नवीनीकरण ऊर्जा स्रोतों पर प्रकाश डालते हुए आह्वान किया कि हमें ऊर्जा का प्रयोग मितव्ययता एवं वैज्ञानिक सोच के साथ करना चाहिये। श्री शर्मा द्वारा पावर प्वांइट प्रस्तुतीकरण के माध्यम से उपविषयों **''ऊर्जा संसाधन''** एवं **''ऊर्जा एवं पर्यावरण''** पर विस्तार से चर्चा कर कुछ महत्वपूर्ण सुझाव दिये गए जिन पर बाल वैज्ञानिक अपने परिवेश में कार्य कर सकते हैं।

द्वितीय तकनीकी सत्र में एन0सी0एस0टी0सी0 नेटवर्क नई दिल्ली के महासचिव श्री रोहताश रघुवंशी ने राष्ट्रीय बाल विज्ञान कांग्रेस पर परिचय देते हुए अपने व्यक्तिगत अनुभवो को सामने रखा कि किस प्रकार बाल वैज्ञानिकों को मुख्य विषय एवं उपविषयों पर कार्य करने हेतु अभिप्रेरण एवं मार्गदर्शन प्रदान किया जा सकता है। नेटवर्क द्वारा नामित मुख्य संदर्भदाता श्री आलोक चौहान द्वारा मुख्य विषय एवं समस्त उपविषयों पर विस्तार से चर्चा की गयी। श्री चौहान द्वारा उन क्षेत्रों पर प्रकाश डला गया जिन पर बाल वैज्ञानिकों को दिशा निर्देश दिये जा सकते हैं ताकि वे अपने क्षेत्र में कार्य कर प्रोजेक्ट प्रस्तुत कर सकें।

भोजनावकाश के उपरान्त गुरूकुल कांगड़ी विश्व विद्यालय से प्रो0 पी0पी0 पाठक (उपाध्यक्ष रा0आ0 समिति) ने **ऊर्जा तंत्र एवं ऊर्जा नियोजन तथा प्रतिरूपण** पर विस्तार से प्रकाश डालते हुए अपने अनुभवों के माध्यम से विषय पर गहनता से चर्चा की। प्रो0 पाठक ने उन क्षेत्रों पर भी प्रकाश डाला जिन पर बाल वैज्ञानिक परियोजना तैयार कर सकते हैं।

तृतीय तकनीकी सभा में राज्य समन्वयक डॉ0 अशोक कुमार पन्त ने बाल विज्ञान कांग्रेस के प्रोजेक्ट्स की मूल अवधारणा एवं प्रोजेक्ट की गुणवत्ता पर पॉवर प्वॉईंण्ट प्रस्तुतीकरण के माध्यम से विस्तार से प्रकाश डाला तथा मार्गदर्शक शिक्षक की भूमिका एवं कर्तव्य को समझाया। डॉ0 पन्त ने कहा कि प्रोजेक्ट का विषय विद्यार्थी द्वारा ही व्यक्त होना चाहिये ताकि उसकी संवेदनशीलता, मौलिकता एवं वैज्ञानिक शोध प्रवृत्ति बाहर आ सके। मार्गदर्शक शिक्षक की भूमिका Friend, Philosopher & Guide की होनी चाहिये। कार्य विद्यार्थियों की टीम का ही होना चाहिये। डॉ0 पन्त ने अपने प्रस्तुतीकरण में रा0बा0वि0कां0 के सभी आयामों पर विस्तार से चर्चा की। इसी सत्र में राज्य अकादमिक समिति के अध्यक्ष श्री जी0के0 शर्मा द्वारा पावर प्वाइंट के द्वारा **मूल्यांकन मानकों** पर विस्तृत चर्चा कर उन सभी बिन्दुओं पर प्रकाश डाला कि प्रोजेक्ट के मूल्यांकन हेतु किन–किन महत्वपूर्ण बातों पर ध्यान रखा जाना चाहिये। उन्होंने जोर देते हुए आह्वान किया कि मार्गदर्शक शिक्षक एवं अकादमिक समन्वयक निश्चित रूप से गुणवत्ता पर ध्यान दें। श्री शर्मा ने बताया कि राष्ट्रीय बाल विज्ञान कांग्रेस विद्यार्थी द्वारा किये गए लघु शोध पर आधारित है। इसमें विद्यार्थी द्वारा मॉडल निर्माण कर प्रस्तुत नहीं किया जाता है अपितु शोध अनुभव पत्र प्रस्तुत किये जाते हैं जिनके साथ अधिकतम 5 पोस्टर, लॉग बुक व फोटोग्राफ होते हैं। अन्य वैज्ञानिक कार्यक्रमों की तरह बाजार से बनाये गए मॉडल इस कार्यक्रम में स्वीकार्य नहीं हैं। इस ओर मार्गदर्शक शिक्षक को ध्यान देना आवश्यक है। सायंकालीन सत्र के समापन से पूर्व सभी जनपदों से आये प्रतिभागियों से अपेक्षा की गई कि समूहवार गतिविधि में अपने–अपने जनपदों के परिप्रेक्ष्य में सम्भावित उन क्षेत्रों को चिन्हित करें जिनमें बाल वैज्ञानिक कार्य कर सकते हैं।

कार्यशाला के द्वितीय दिवस का प्रारम्भ

विगत दिवस की सक्षिप्त समीक्षा के उपरान्त राज्य समन्वयक डॉ0 अशोक कुमार पन्त द्वारा किया गया। इस सभा में विगत दिवस के समूह कार्य का जनपदवार प्रस्तुतीकरण किया गया तथा प्रत्येक समूह प्रमुख द्वारा अपने–अपने जनपदों के सभी उपविषयों पर सम्भावित परियोजना कार्यक्षेत्रों को प्रस्तुत किया गया। विभिन्न समूहों द्वारा ऊर्जा के 6 उपविषयों पर 100 से भी अधिक क्षेत्र चिन्हित किये गये। उपरोक्तानुसार प्रस्तुतीकरण के उपरान्त राज्य समन्वयक ने कहा कि जिस मनोयोग से जनपदवार प्रस्तुतीकरण हुए हैं वह निश्चित ही उत्साहजनक है तथा कार्यशाला की सफलता को प्रदर्शित करते हैं। उन्होंने राष्ट्रीय कार्यशाला में चिन्हित परियोजना बिन्दुओं की छायाप्रतियां भी प्रतिभागियों को प्रदान की।

जनपदवार प्रस्तुतीकरण के उपरान्त अनुभव आदान–प्रदान सत्र के दौरान राष्ट्रीय स्तर पर बाल वैज्ञानिकों के साथ प्रतिभाग किये हुए डॉ0 सुनील पाण्डे (निदेशक निधि संस्था) जिला समन्वयक चम्पावत ने अपने अनुभवों को सामने रखा वहीं भारतीय विज्ञान कांग्रेस में बाल वैज्ञानिकों के साथ प्रतिभाग करने के अपने अनुभवों को डॉ0 विकास पन्त जिला समन्वयक पिथौरागढ़ ने सामने रखा। दोनों वक्ताओं ने बताया कि उत्तराखण्ड के बाल वैज्ञानिकों को अपनी परियोजना गुणवत्ता में सुधार के साथ–साथ प्रस्तुतीकरण कौशल विकसित करने की आवश्यकता है। डायट रूड़की के प्रवक्ता श्री एस0के0 शर्मा ने अपने विचार व्यक्त करते हुए इस गतिविधि में डायट की महत्वपूर्ण भूमिका एवं महत्व पर प्रकाश डाला। एस0सी0ई0आर0टी0 नरेन्द्रनगर के गणित/विज्ञान विभाग के प्रभारी श्री एम0के0 सेमवाल ने बताया कि एस0सी0ई0आर0टी0 विज्ञान कार्यक्रमों को सदैव आयोजित करती है। उसी क्रम में राष्ट्रीय बाल विज्ञान कांग्रेस को एक महत्वपूर्ण कड़ी बनाया जा सकता है। श्री सेमवाल ने इन्सपायर कार्यक्रम की भी जानकारी देते हुए राष्ट्रीय बाल विज्ञान कांग्रेस में एस0सी0ई0आर0टी0 के सहयोग की बात कही। इन सत्रो का संचालन सह राज्य समन्वयक श्री गजेन्द्र सिहं बोहरा द्वारा किया गया।

सत्र की समाप्ति पर राज्य समन्वयक डॉ0 अशोक कुमार पन्त ने कार्यशाला में आए प्रतिभागियों की भूमिका की समीक्षा करते हुए कहा कि विभिन्न जनपदों से आये संदर्भ शिक्षकों का दायित्व है कि वे जनपद स्तरीय/ब्लॉक स्तरीय कायशाला में प्रतिभाग कर गतिविधि की व्याख्या के साथ–साथ अकादमिक पक्ष पर विस्तृत चर्चा करें तथा विभिन्न विद्यालयों के मार्गदर्शक शिक्षकों के सम्पर्क में रहकर प्रोजेक्ट की गुणवत्ता एवं रा0बा0वि0कां0 की अवधारणा पर प्रोजेक्ट तैयार करवायें। उनसे अपेक्षा की जाती है कि वे जिला समन्वयक/अकादमिक समन्वयक के सम्पर्क में रहकर जनपद/ब्लॉक स्तरीय गतिविधियों में प्रभावी भूमिका में रहें। जिला अकादमिक समन्वयक पूर्ण रूप से जनपद स्तर पर प्रोजेक्ट की गुणवत्ता निर्धारण हेतु उत्तरदायित्वपूर्ण भूमिका में रहेंगे ताकि मार्गदर्शक शिक्षक/बाल वैज्ञानिकों को अकादमिक सहयोग प्राप्त हो सके। डायट के प्रवक्ताओं की भूमिका होगी कि वे एक ओर जनपद/ब्लॉक स्तर पर मुख्य विषय एवं उप विषयों के अन्तर्गत अकादमिक सहयोग प्रदान करेंगे वहीं जनपद/ब्लॉक स्तर पर आयोजन के दौरान मूल्यांकन कार्य में भी सहयोग करेंगे। डायट से अपेक्षा की गई कि है कि जनपद/ब्लॉक स्तरीय आयोजन/प्रशिक्षणों हेतु व्यवस्थाऐं प्रदान करने में भी सहयोग प्राप्त होगा। उपरोक्त समस्त कार्यों एवं भूमिकाओं के समन्वयन में जिला समन्वयक की प्रभावी भूमिका स्वतः स्पष्ट है। मण्डलीय समन्वयक अपने–अपने मण्डलों के समस्त जनपदों में समस्त प्रशिक्षणों/आयोजनों में राज्य के प्रतिनिधि के रूप में समन्वयन, सहयोग एवं अनुश्रवण हेतु उत्तरदायी होगे तथा जिला समन्वयकों के माध्यम से मण्डल में गतिविधि को और अधिक प्रभावी सिद्ध करने में सहयोग प्रदान करेंगे। डॉ0 पन्त ने इस अवसर पर यह भी अवगत कराया कि वर्ष 2012 की राज्य स्तरीय बाल विज्ञान कांग्रेस जनपद नैनीताल में तथा राष्ट्रीय बाल विज्ञान कांग्रेस 27–31 दिसम्बर 2012 को बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय में आयोजित की जा रही है। उपरोक्त बिन्दुओं के अतिरिक्त प्रोजेक्ट कार्य एवं प्रस्तुतीकरण की गुणवत्ता पर विशेष जोर देने की बात कही। इस सत्र में प्रतिभागियों की जिज्ञासा का भी समाधान किया गया।

राज्य स्तरीय शिक्षक विज्ञान सम्मेलन आयोजित करने की दिशा में पहल

गतवर्श के राष्ट्रीय बाल विज्ञान कांग्रेस के आयोजन के अवसर पर राष्ट्रीय बाल विज्ञान कांग्रेस के मार्गदर्शक शिक्षकों तथा एस्कोर्ट शिक्षकों द्वारा उत्तराखण्ड राज्य में राष्ट्रीय शिक्षक विज्ञान सम्मेलन की तर्ज पर राज्य शिक्षक विज्ञान सम्मेलन आयोजित करने की मांग की गई थी शिक्षकों का विचार था कि यह सम्मेलन हर वर्ष एक नये वैज्ञानिक केन्द्रीय विषय पर शिक्षकों को नये वैज्ञानिक संदर्भों में नई वैज्ञानिक सोच के साथ चिन्तन और शिक्षण कार्य करने के नये अवसर प्रदान करेगा। इसी दृष्टि से पहल द्वारा इस वर्ष राज्य शिक्षक विज्ञान सम्मेलन के आयोजन की कार्ययोजना उत्तराखण्ड विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद (यू–कॉस्ट) को प्रस्तुत की गई है। शिक्षक विज्ञान कांग्रेस के आयोजन हेतु परिषद से सैद्धान्तिक सहमति भी प्राप्त हो गई है। उत्तराखण्ड राज्य षिक्षक विज्ञान सम्मेलन का मुख्य विषय **''बेहतर जीवन के लिए विज्ञान शिक्षा''** होगा। इस मुख्य विषय के 6 उपविषय यथा–1. प्रभावी विज्ञान कक्षा शिक्षण 2. विज्ञान शिक्षण एवं वैज्ञानिक अभिरूचि का विकास 3. विज्ञान शिक्षा की पाठयचर्या तथा पाठय सामग्री 4. विज्ञान शिक्षा–पारम्परिक विज्ञान एवं आधुनिक विज्ञान 5. सहायक सामग्री और विज्ञान शिक्षण में उनका प्रभावी उपयोग 6. नवाचारी विज्ञान शिक्षा कार्यक्रम होंगें। यह सम्मेलन दिनांक 14–15 जनवरी 2013 की तिथियों में राजीव गाँधी नवोदय विद्यालय तपोवन रोड, ननूरखेड़ा, देहरादून में आयोजित किया जा रहा है।

सभी शिक्षकों से अनुरोध है कि उपरोक्त मुख्य विषय के 6 उपविषयों में से किसी भी एक उपविषय के अन्तर्गत अपना शोध अनुभव पत्र दिनांक 31 दिसम्बर, 2012 तक अनिवार्य रूप से डाक अथवा ई–मेल द्वारा निम्नांकित पते पर भेजने का कष्ट करें। ध्यान रहें कि एक शोध अनुभव पत्र एक ही शिक्षक के नाम से प्रस्तुत होगा। संयुक्त अनुभव पत्र अनुमन्य नहीं होंगे तथा उपर्युक्त तिथि के बाद प्राप्त शोध अनुभव पत्रों पर विचार

किया जाना संभव नहीं होगा।

शोध पत्र प्रेशण हेतु पता–

श्रीमती कमला पन्त, प्रमुख समन्वयक
राज्य शिक्षक विज्ञान सम्मेलन 2012–13

मृत्युंजय धाम, 18 शास्त्री नगर, हरिद्वार रोड, देहरादून–248001

फोन–0135–2669236 मो0 9412047994

Email-kamala_pahal@yahoo.co.in

डा0 अशोक कुमार पन्त राष्ट्रीय शिक्षक विज्ञान सम्मेलन के राष्ट्रीय संयोजक मनोनीत

विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संचार परिषद विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग भारत सरकार तथा एन0सी0एस0टी0सी0 नेटवर्क के तत्वाधान में आयोजित और वर्श 2013 के लिये प्रस्तावित राष्ट्रीय शिक्षक विज्ञान सम्मेलन के आयोजन हेतु एस0डी0एस0 राजकीय इण्टर कालेज, पिथौरागढ़ के प्रधानाचार्य तथा पहल के अवैतनिक वैज्ञानिक सलाहकार डा0 अशोक कुमार पन्त को राष्ट्रीय संयोजक मनोनीत किया गया है। भारत सरकार द्वारा इस आशय का पत्र निदेशक, विद्यालयी शिक्षा विभाग को भेजा गया है और शिक्षा विभाग द्वारा डा0 पन्त को राष्ट्रीय शिक्षक विज्ञान सम्मेलन का राष्ट्रीय संयोजक नामित करने हर्ष व्यक्त करते हुए भारत सरकार को उनके मनोनयन की स्वीकृति प्रेषित कर दी गई है।

पहल के आगामी कार्यकम

1. ब्लाक व जनपद स्तरीय राष्ट्रीय बाल विज्ञान कांग्रेस–
   दिनांक–अक्टूबर द्वितीय तृतीय सप्ताह
   स्थान–समस्त ब्लाक व जनपद मुख्यालयों पर
2. राज्य स्तरीय राष्ट्रीय बाल विज्ञान कांग्रेस दिनांक–24 व 25 नवम्बर, 2012 स्थान–राजकीय बालिका इण्टर कालेज, हल्द्वानी, जनपद नैनीताल।
3. राष्ट्रीय बाल विज्ञान कांग्रेस
   दिनांक–27 से 31 दिसम्बर 2012
   स्थान–बनारस हिन्दू विश्व विद्यालय वाराणसी उत्तर प्रदेश।

एस. के. गुप्ता

आत्मा!
एक वैज्ञानिक स्पष्टीकरण

उसकी **'आत्मा'** भटकेगी, यदि उसके संस्कार ठीक से न हुए! 'आत्मा' अतृप्त रह जाएगी! 'आत्मा' फिर जन्म लेगी! ईश्वर से प्रार्थना है कि वे उसकी 'आत्मा' को अपने चरणों में स्थान दें आदि, आदि! न जाने कितने ऐसे वाक्यांश हैं जिन्हें हम दिन-प्रतिदिन होने वाले वार्तालापों, घटनाओं, भावनाओं की अभिव्यक्ति में प्रयोग करते हैं और उनमें 'आत्मा' शब्द का प्रयोग होते देखते हैं। सभी तथ्य वैज्ञानिक आधार लिए हुए हैं, पर अंधविश्वास या यूँ कहिए अवैज्ञानिक सोच 'आत्मा' को पता नही कौन सी वस्तु समझती है? यह समझ से परे है। बहुत से लोगों से पूछा कि 'आत्मा' को क्या आपने देखा? उत्तर तरह-तरह के मिले पर असंतुष्ट करने वाले।

आपने तो यह भी सुना होगा कि **'आत्मा'** अजर और अमर है, **"न तो** कोई शस्त्र इसे भेद सकता है, न अग्नि इसे जला सकती है। न जल उसे गला सकता है ..... और न वायु ही सुखा सकती है।।" ये पंक्तियाँ 'गीता' के निम्न श्लोक का भावार्थ है:

नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि, नैनं दहति पावकः।
न चैनं क्लेदयन्त्यापो न शोषयति मारुतः।।''

हमारे धार्मिक ग्रंथ, वैज्ञानिक तथ्यों से भरे पड़े हैं। जब वे लिखे गये थे तो उनको समझाने का तरीका सरल व धार्मिक भावना से ओत–प्रोत होता था। यदि ऐसा न किया गया होता तो कोई बरगद या पीतल न बचता क्योकि उनको धर्म के साथ जोड़ा गया। एक विशाल बरगद

अपनी जड़ों से कितनी मिटटी को बाँधे रखता है और वह वातावरण में कितनी अधिक प्राणवायु (आक्सीजन) छोड़ता है, यह वैज्ञानिक तथ्य है। 'तुलसी' के औषधीय महत्व के कारण ही प्रत्येक प्रांगण में तुलसी का पौधा मिल जायेगा। ऐसे ही **'आत्मा'** को समझने के लिए, प्रस्तुत है एक वैज्ञानिक विश्लेषण।

'डार्विन' का जैव विकास सिद्धांत सर्वमान्य है, जो यह समझाता है कि प्रत्येक जीव, जो भी प्रकृति में उपस्थित था या है, वह एक नियमित विकास की प्रक्रिया के फलस्वरूप विकसित हुआ और उसके विकसित होने में कम से कम पाँच सिद्धांत कार्य करते हैं:

1. **सभी जीवों में संतानोत्पत्ति की अपार क्षमता होती है।**
2. **जीवन के लिए अन्तर्जातीय, अन्तराजातीय व पर्यावरणीय संघर्ष होता है** (रहने के स्थान के लिए, भोजन के लिए, प्रजनन के लिए)।
3. **संघर्षरत रहते हुए जीवों में बहुत सी लाभकारी या हानिकारक विभिन्नताएँ (गुण) उत्पन्न होती हैं।**
4. **जिन जीवों में हानिकारक गुणों के अनुपात में लाभकारी गुण अधिक होते हैं, वे जीवन के संघर्ष में सफल होते हैं और योग्यतम (फिटेस्ट) कहलाते हैं।** ऐसे ही गुणों को रखने वाले जीवों का प्रकृति द्वारा चयन किया जाता है (**प्रकृति–वरण** अर्थात **नेचुरल सेलेक्शन**)। अधिक हानिकारक गुणों से परिपूर्ण जीव अपने आपको प्रकृति के अनुकूल सिद्व नहीं कर पाते और परिणामतः **'जीवन संघर्ष'** का युद्ध हारते रहते हैं, और एक दिन वह भी आता है जब उनका अस्तित्व ही इस धरती से समाप्त हो जाता है (15 करोड़ वर्ष तक इस पृथ्वी पर विचरने वाले विशालकाय सरीसृप **'डायनासोर'** कहाँ गये? अंग्रेजी फिल्म 'जुरैसिक पार्क' में मनुष्य को उनके साथ दिखाया जाना एक काल्पनिक रोमाँच है)
5. **प्रकृति जिनका चयन करती है, जब प्रजनन करते हैं तो उनके द्वारा उपार्जित किये गये लाभकारी गुण अगली पीढ़ी पर प्राकृतिक चयन प्रक्रिया लागू रहती है।** फिर उनमें और सुधार होता है। इस प्रकार कई पीढ़ियों तक ऐसा सुधार होता है। इस प्रकार कई पीढ़ियों तक ऐसा सुधार होते रहने से एक पीढ़ी ऐसी प्रतीत होने लगती है जो स्पष्टतः पृथक दिखाई देती है। उसी पीढ़ी को नई **'जाति'** की सज्ञा दी जाती है।

यह थी महान प्रकृति विज्ञानी **डार्विन** के **'जैव विकास सिद्धाँत'** की और **'जाति की उत्पत्ति'** की अवधारणा। **डार्विन** के सिद्धाँन्त उन ईश्वरवादी भावनाओं को ठेस पहुँचाते लगते थे जो ये मानते थे कि **ईश्वर** ने ही इस जीवित संसार की रचना की। तभी तो इस बात पर बहुत वाद–विवाद रहा कि अमेरिका के स्कूलों में जैव विकास सिद्धाँत पढ़ाया जाय या नहीं।

खैर! **'डार्विन'** के सिंद्धांत **'कि अनुकूल परिवर्तन पीढ़ी दर पीढ़ी स्थानान्तरित होते रहते है'** की बहुत आलोचना हुई। वे वास्तव में यह स्पष्ट नहीं कर पाये कि आनुवंशिकता की प्रक्रिया कैसे सम्पन्न होती है। आधुनिक खोजों के आधार पर डार्विनवाद को बल मिलने लगा और डार्विनवाद की व्याख्या **'नव डार्विनवाद'** के रूप में सामने आने लगी। **'नव डार्विनवाद'** से जुड़े अनेक वैज्ञानिकों में से **'ऑगस्ट वीज़मैन'** (1904) एक ऐसे वैज्ञानिक थे जिन्होंने आनुवांशिक होने वाले व आनुवांशिक न होने वाले गुणों में न केवल विभेदन किया बल्कि **'जनन द्रव्य की सततता का सिद्धाँत' (जर्मप्लाज्म थ्योरी)** दिया। यह सिद्धान्त पूर्व में संदर्भित **'गीता'** के श्लोक की **'आत्मा'** की व्याख्या करता दिखता है।

वीज़मैन ने कहा कि जीव के शरीर में दो प्रकार का जीवद्रव्य होता है – एक दैहिक द्रव्य **(सोमेटोप्लाज्म)** तथा दूसरा, **जनन द्रव्य (जर्मप्लाज़्म)**। **दैहिक द्रव्य** वह होता है जो शरीर की रचना में भाग लेता है और आनुवंशिकता में उसकी कोई भूमिका नहीं होती, जबकि **जनन द्रव्य** वह है जो प्रजनन में भाग लेता है (जैसे नर के वृषण में उत्पन्न शुक्राणु तथा मादा के अण्डाशय में उत्पन्न अंडे) और वही एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में गुणों का वाहक (आनुवांशिकता) होता है। माता व पिता के संसर्ग से नये शिशु का जन्म होता है, जिसमें माता व पिता, दोनों के गुणों **(जीन्स)** का समावेश होता है। आधुनिक विज्ञान की भाषा में गुणों के वाहकों के रूप में गुणसूत्रों पर उपस्थित **जीन** और कुछ नहीं बल्कि एक रासायनिक अणु **डी.एन.ए. (डी ऑक्सीराइबोन्यूक्लिक एसिड)** का स्वरूप होते हैं। **जननद्रव्य 'अमर' होता है** और वह पीढ़ी दर पीढ़ी चिरस्थायी रहता है। माँ–बाप के जनन द्रव्य के कारण ही आज उनकी संताने हैं, भले ही उनके पूर्वज आज न हों। उनका भौतिक शरीर **(सोमेटोप्लाज्म)** तो नष्ट हो गया परन्तु आज उनका वंश जीवित है। इसीलिए जनन द्रव्य (पूर्वजों की आत्मा) सदैव सतत रहता है, मरता नहीं। यह सिद्धांत हर जीव पर लागू होता है, चाहे वह कितना भी सूक्ष्म हो और चाहे जितना भी विशाल। प्रजनन की विधि जैसी भी हो, जनन द्रव्य ही अगली पीढ़ी को जन्म देता है। पुष्प में उपस्थित पराग व अण्डाशय के संसर्ग से **फल** बनता है और **'फल'** में बीज होते हैं। बीज से ही फिर अपने पूर्वज समान पौधा या वृक्ष जन्म लेता है। यही क्रम जीवन पर्यन्त चलता है।

जनन द्रव्य ही **'आत्मा'** है जिसे कोई शस्त्र, अग्नि जल वायु आदि नष्ट नहीं कर सकती। **'आत्मा'** (अगली पीढ़ी) यदि अच्छा करे तो कोई चिन्ता नहीं, पूर्वजों की अपेक्षा पर अच्छी न उतरे तो **'आत्मा'** अतृप्त होगी ही और भटकेगी ही। और जो निःसन्तान रह जाय, यह एक परिवार में हो सकता है, वंश के अन्य सदस्य तो जननद्रव्य को आगे बढ़ाते हैं।

'आत्मा' मनुष्य की अभिव्यक्ति है। वर्ना पेड़, पौधों, अन्य जन्तुओं की जीने–मरने, काटे जाने मारे–जाने की किसे चिन्ता? क्या उनकी 'आत्मा' नहीं होती?

एसो. प्रो. (से. नि.)
डी.बी.एस. कालेज, देहरादून
सचिव
भारतीय विज्ञान लेखक संघ,
उत्तराखण्ड प्रभाग

काली शंकर

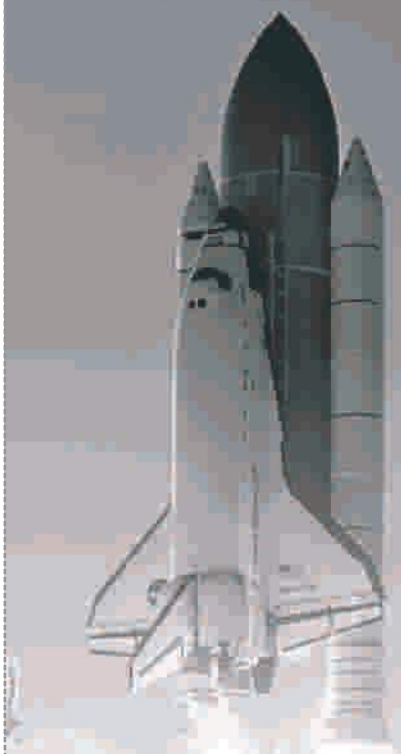

स्पेस शटल युग का अन्त

बारह अप्रैल सन् इक्यासी,
एक महान घटी थी घटना।
अमरीकी स्पेस शटल की,
प्रथम उड़ान की थी यह घटना।
एक सौ पैतिस शटल उड़ानों,
में दो असफल हुई उड़ानें।
बहुत भरोसेमंद शटल थी,
शटल आंकड़े यही बखानें।
कोलम्बिया था नाम शटल का,
जॉन यंग इसके थे कमान्डर।
बने पायलट बॉब क्रिपन थे,
शटल की चर्चा सभी जगह पर।
एक शटल से कई प्रमोचन,
ही तो इसकी विशिष्टता थी।
रीयूजेबुल तभी तो इसको,
कहती वैज्ञानिक भाषा थी।
अंतरिक्ष अन्वेषण क्षेत्र में,
शटल ने अतिशय नाम कमाया।
भाँति भाँति अभियानों द्वारा,
इसकी गरिमा को चमकाया।
इन शटलों की कुल संख्या थी,
गिनती में कुल पाँच।
कोलम्बिया तथा चैलेंजर,
अटलान्टीस के साथ।
कई उपग्रह एवं पोबें,
चढ़कर पहुँची अंतरिक्ष में।
अमरीकी स्पेस शटल से,
हुए व्यस्त फिर जन सेवा में।
डिस्कवरी, एन्डयौर नाम थे,
जग में अति विख्यात।
इनके अंतरिक्ष अन्वेषण,
में बीते दिन रात।

अल्फा अंतरिक्ष स्टेशन,
के निर्माण में अहम भूमिका।
केवल थी स्पेसशटल की,
सपना पूरा हुआ था जन का। कोलम्बिया
तथा चैलेंजर,
दुर्घटना में नष्ट हुए थे।
पर अपने करतब दिखला के,
दुनिया में विख्यात हुए थे।

दो हजार ग्यारह के वर्ष में,
आठ जुलाई की थी बात।
पुनः शटल थी अंतरिक्ष में,
जो कि आखिरी बनी उड़ान। वैसे तो
स्पेस शटल के,
कार्यों की सूची है महान।
पर उनमें कुछ अति विशिष्ट हैं,
जग ने दिया उन्हे सम्मान।
शटल के इस आखिरी मिशन की,
विश्व में चर्चा बहुत हुई थी।
अटलान्टीस था नाम शटल का,
शटल की यह आखिरी घड़ी थी।
मैगेलन तथा उलायसेस प्रोबों,
चन्द्रा एक्स किरण उपग्रह को।
हब्बल अंतरिक्ष दूरबीन को,
एवं गैलीलियो यान का।

अप्रैल, सन् इक्यासी से , दो
हजार ग्यारह जुलाई मास।
एक सौ पैंतिस शटल उड़ानें,
वैज्ञानिकों को आई रास।
पहुँचाया स्पेस शटल ने,
अंतरिक्ष में इनको।
प्राप्त हुए वैज्ञानिक डाटा,
इनके द्वारा जग को।
दो हजार ग्यारह की जुलाई,
मास के बाद नहीं अब होगी।
शटल उड़ानें अन्तरिक्ष में,
क्योंकि शटल निद्रा में होगी। शटल के
तीन प्रमुख इंजन औ,
दो राकेट बूस्टर सब मिलकर।
तैतीस लाख किलोग्राम का,

पैदा करें प्रणोद भयंकर।
अन्तरिक्ष अन्वेषण क्षेत्र से,
शटल हो गई सेवा निवृत्त।
अन्तरिक्ष परिवहन कार्य से,
लिया शटल ने स्वयं विरक्ति। अंग्रेजी में
इस प्रणोद को,
थ्रस्ट नाम से जाना जाता।
यह प्रणोद स्पेस शटल को,
ऊँचे अन्तरिक्ष पहुँचाता।

अन्तरिक्ष में सबसे लम्बी,
उम्र में जाने वाले जन थे।
जॉन ग्लेन जो अठहत्तर की
लम्बी उम्र में वहाँ गये थे। इस प्रणोद
की हम यदि तुलना,
पहले दो अमरीकी मानव
युक्त मिशन से करके देखें,
विचित्रता का होता अनुभव।

इनको अंतरिक्ष ले जाने,
वाली भी स्पेस शटल थी।
तथा शटल की प्रथम कमान्डर,
महिला एलीन कालिन्स हीं थी।
''रेडस्टोन'' प्रथम राकेट से,
जनित प्रणोद बहुत थोड़ा था।
पैंतिस हजार तीन सौ इक्यासी,
किलोग्राम का यह प्रणोद था।
शटल उड़ानों की कुल संख्या,
एक सौ पैंतिस पूर्ण हुई थी।
इसके द्वारा तीन सौ पच्चपन,
लोगों की यात्रा हुई थी।
दूजा था 'अटलस' राकेट के,
द्वारा जनित प्रणोद मात्रा।
एक लाख चौसठ हजार बस,
किलोग्राम का यह प्रणोद था।
तीस वर्ष और तीन महीने,
के अपने लम्बे जीवन में।
पचपन करोड़ मील की लम्बी,
कीया यात्रा अंतरिक्ष में।
इस प्रकार स्पेस शटल है,
एक बहुत ताकतवर यान।
तीस वर्ष और तीन महीने,
छाया रहा यह सर्व जहान।
इक्कीस हजार बार पृथ्वी के,
चक्कर लिये थे इसी शटल ने।
तीन वर्ष दो सौ इक्कीस दिन,
कुल प्रवास था अंतरिक्ष में।
शटल के तीन प्रमुख इंजनों में,
ठंन्डा ईंधन हुआ प्रयोग।
द्रव हाइड्रोजन यह ईंधन है,
जाने यह वैज्ञानिक लोग।

अन्तिम शटल उड़ान मिशन के
क्रिस फेर्ग्युसन बने कमान्डर।
पूरी की अंतिम उड़ान को,
'शटल ग्रेट तुम' ऐसा कहकर।
दूजे नम्बर पर पृथ्वी का,
यह सबसे ठंडा ईंधन है।
माइनस चार सौ तेईस डिग्री,
फारेनहाइट का तापमान है।

बहुत अधिक रहस्यमय तथ्यों,
साथ में भी चौकाने वाले।
भरी हुई स्पेस शटल है,
महानता दिखलाने वाले।
लेकिन जब यह दहन कक्ष में
द्रव आक्सीजन के सॅग मिलकर
जलता है तो दहन कक्ष का,
तापमान होता है भयंकर।

फारेनहाइट में यह हो जाता,
छे हजार डिग्री से ज्यादा।
जो कि लौह क्वथनांक से ज्यादा,
तापमान का गुण दर्शाता।
लेकिन यह तो अंतरिक्ष में,
बड़े बड़े है भार उठाती।
उन्तिस हजार औ नौ सौ अड़तिस,
किलोग्राम यह बोझ उठाती।
शटल के तीन प्रमुख इंजन को,
जो पहुँचाता द्रव ईंधन है।
टर्बो पम्प उसे सब कहते,
इसकी ख्याति बहुत ज्यादा है।
केवल आठ मिनट के अन्दर,
शटल प्राप्त करती स्पीड।
सत्रह हजार मील प्रति घंटा,
सुनने में लगता है अजीब।

पृथ्वी ग्रह का सबसे ज्यादा,
ताकतवर यह पम्प कहाता।
प्रति सेकन्ड एक हजार गैलन,
ईंधन की आपूर्ति कराता।
शटल के हर एक राकेट बूस्टर,
की ईंधन की खपत बहुत हैं।
प्रति सेकेन्ड यह पाँच टनों की,
सुनने में आश्चर्यजनक है।

यदि इससे ईंधन की पम्पिंग,
के बजाय पानी की पम्पिग।
करे तो पायेंगे विचित्रता,
चौंकेगे हम यह सब सुनकर। ऊँचाई
राकेट बूस्टर की,
है स्टैचू ऑफ लिबर्टी।
लेकिन ईंधन संग बूस्टर की,
तौल तो तीन गुना है बनती।

कि, यह पच्चिस सेकेन्ड में ही,
औसत साइज के स्विमिंग पूल को।
खाली करके दिखला सकता,
कहें जो इसकी विशिष्टता को। शटल के
तीन प्रमुख इंजनों में,
होता है प्रत्येक का भार।
एक–सातवाँ भाग ट्रेन के
इंजन का यह होता भार।

तीन प्रमुख इंजनों के द्वारा,
जनित जो ऊर्जा की मात्रा है।
अमरीका के हूवर डैम की,
ऊर्जा का वह तेइस गुना है। पर प्रत्येक
शटल इंजन की,
हार्स पावर है बहुत विशाल।
उन्तालिस इंजनों की पावर,
एक शटल इंजन के भाल।

शटल में एक भुजा होती है,
कहते सब रोबोट भुजा हैं।
इसका भार धरातल पर है,
चार सौ ग्यारह किलोग्राम है।

के–1058,
आशियाना कालोनी,
कानपुर रोड़,
लखनऊ–226012 (यू.पी.)

प्राकृतिक आपदाएँ
भ्रांतियाँ एवं तथ्य, एक आकलन

मुकुन्द नीलकण्ठ जोशी

1. भ्रांति – ये आपदाएँ प्राकृतिक हैं अर्थात् मनुष्य के क्रियाकलापों का इनसे कोई लेना देना नहीं।

तथ्य – यद्यपि यह ठीक है कि अनेक आपदाएँ जैसे तूफान, भूकम्प आदि प्राकृतिक कारणों से ही होते हैं परन्तु अन्य अनेक प्राकृतिक घटनाओं जैसे भूस्खलन के लिए मनुष्य के कार्यकलाप भी जिम्मेदार होते हैं।

2. भ्रांति – प्राकृतिक आपदाएँ अनोखी अनहोनी घटनाएं हैं तथा हमारे विकास कार्यों के कारण होती हैं।

तथ्य – जिन्हें हम आपदा कहते हैं वे अत्यन्त सामान्य प्राकृतिक घटनाएं हैं। वे हमारे लिए आपदा केवल इसलिए हैं कि उनसे धन–जन की हानि होती है। हमारे विकास कार्यों से कभी–कभी ये घटनाएं आपदा का रूप ले लेती हैं जैसे भूस्खलन एक प्राकृतिक घटना है परन्तु सड़क निर्माण या विस्फोटों के कारण ये अधिक हो सकते हैं और यदि ये आबादी के क्षेत्र में हों तो आपदा बन जाते हैं।

3. भ्रांति – प्राकृतिक आपदाएँ उस क्षेत्र में रहने वाले मनुष्यों के पापों का परिणाम हैं।

तथ्य – भूकम्प, भूस्खलन, बाढ़, तूफान मनुष्य के पृथ्वी पर आने के पहले भी होते रहे हैं, तब पाप करने के लिए कौन था?

4. भ्रांति – प्राकृतिक आपदाओं की भविष्यवाणी की जा सकती है।

तथ्य – तूफान या बाढ़ के सम्बन्ध में यह कुछ हद तक ठीक है। भूस्खलन क्षेत्रों का भी अनुमान लगाया जा सकता है। भूकम्प की भविष्यवाणी सम्भव नहीं है।

5. भ्रांति – भूकम्प की भविष्यवाणी वैज्ञानिकों द्वारा की जा सकती है।

तथ्य – भूकम्प के आने के दिन, समय, स्थान, तीव्रता आदि की भविष्यवाणी करना अंधेरे कमरे में सुई खोजने के

समान है। वैज्ञानिक प्रयास तो कर रहे हैं परन्तु सफलता अभी तक नहीं मिली है। कभी किसी को सींक या तीली मिल जाती है तो उसे लगता है सुई मिल गई। अनेक ऐसे भी वैज्ञानिक हैं जिन्हें मिलता कुछ नहीं पर अंधेरे कमरे में अपनी भी उपस्थिति जताने के लिए वे 'मिल गई' 'मिल गई' जैसा मिथ्या प्रचार करते रहते हैं।

6. भ्रांति – भूकम्प की भविष्यवाणी ज्योतिषियों द्वारा की जा सकती है।

तथ्य – ज्योतिष के दो भाग हैं। गणित ज्योतिष तथा फलित ज्योतिष। गणित ज्योतिष एक पूर्ण विकसित विज्ञान है जिसमें ग्रह, नक्षत्र आदि की गतियों का अध्ययन किया जाता है। इससे ग्रहण, ग्रहों के उदय–अस्त, उनके अलग–अलग राशियों में भ्रमण आदि के बारे में ठीक–ठीक बताया जा सकता है। इसके विपरीत फलित ज्योतिष एक अनुमान शास्त्र है। इसके समर्थक इसके भी वैज्ञानिक होने का दावा करते रहते हैं। यह बहस का विषय हो सकता है। परन्तु भूकम्प की भविष्यवाणी फलित ज्योतिष से संभव नहीं है। गणित ज्योतिष से भी नहीं क्योंकि भूकम्प का आसमान के ग्रहों की गतियों से कोई संबंध नहीं होना।

7. भ्रांति – ज्वालामुखी का फटना भी एक प्राकृतिक आपदा है। भारत में यदि कल कहीं कोई ज्वालामुखी फटा तो?
तथ्य – ज्वालामुखी कहीं भी नहीं फटते। पृथ्वी पर दो निश्चित पट्टियाँ हैं। उन क्षेत्रों में ही फटते है। भारत में केवल अण्डमान–निकोबार द्वीप समूह में जीवित ज्वालामुखी हैं। बाकी कहीं नहीं।

8. भ्रांति – खनिज खनन के कारण भूस्खलन जैसी आपदाएँ बढ़ जाती हैं अतः खनिजों का खनन एकदम बंद कर देना चाहिए।
तथ्य – यह तो वही बात हुई कि चलते समय पैर फिसलने की सम्भावना है इसलिए चलना ही नहीं चाहिए। मूल प्रश्न है हमें खनिजों की आवश्यकता है अथवा नहीं। यदि है तो खनन करना ही होगा। हाँ, खनन करते समय पर्यावरण सुरक्षा का ध्यान रखा जाना चाहिए।

9. भ्रांति – सड़कों के निर्माण से भूस्खलन अधिक हो जाता है। इसलिए सड़कें – विशेषकर ऊँचे पहाड़ी क्षेत्रों में नहीं बनाई जानी चाहिए।

तथ्य – इसके विपरीत भूकम्प जैसी आपदा के समय सड़कों द्वारा ही राहत सामग्री पहुँचाई जा सकती है, बचाव कार्य किया जा सकता है। जहाँ आवागमन के साधन ही न हों, वहाँ कोई सहायता कैसे कर पायेगा? हाँ, सड़कों के निर्माण के समय सही भूवैज्ञानिक अध्ययन से भूस्खलन की समस्या का समाधान किया जा सकता है।

10. भ्रांति – पृथ्वी का तापमान बढ़ रहा है, यह भी एक प्रकार की प्राकृतिक आपदा है। जिसके कारण ध्रुव प्रदेशों की बर्फ पिघल जायेगी, समुद्र का तल बढ़ जायेगा और अनेक द्वीप तथा तटवर्ती क्षेत्र डूब जायेंगे। इस तापमान वृद्धि के लिए हमारी औद्योगिक उन्नति जिम्मेदार है।

तथ्य – तापमान वृद्धि एक पूर्णरूपेण प्राकृतिक प्रक्रिया है। प्लीस्टोसीन काल (गत दस लाख वर्ष) में ही कम से कम चार बार हिमकाल (अत्यन्त शीत काल) आया और दो हिमकालों के बीच में गरम समय। उसके पूर्व भी ठण्डा और गरम समय कई बार होता रहा है यह एक भूवैज्ञानिक तथ्य है। उन दिनों जब मनुष्य ही नहीं था तब कहां था औद्योगिक विकास। इसलिए एक प्राकृतिक प्रक्रिया के लिए अपने को ही शाप देते रहने की कोई आवश्यकता नही है। वैसे भी पृथ्वी का तापमान बढ़ने के बारे में वैज्ञानिकों की 15–16 परिकल्पनाएँ हैं जिनके अनुसार यह तापमान वर्तमान तथा निकट भविष्य में 0.01° से 3.0° सें० तक बढने का अनुमान लगाया गया है। अनेक अन्य वैज्ञानिक तापमान वृद्धि की बात को सिरे से नकारते हैं।

11. भ्रांति – प्राकृतिक आपदाओं को यज्ञ, जप, प्रार्थना आदि उपायों से रोका जा सकता है।

तथ्य – नहीं, ये उपाय व्यक्ति को मानसिक शान्ति या आपदा के समय धैर्य तो प्रदान कर सकते हैं परन्तु ये प्राकृतिक धटनाएँ रोकी नहीं जा सकतीं। इसलिये योगियों, बाबाओं, महन्तों आदि से बचकर ही रहें।

12. भ्रांति – हमारी सारी भ्रांतियाँ दूर हो गईं। किसी प्रकार की कोई पर्यावरणीय समस्या है ही नहीं।

तथ्य – यह भी एक भ्रांति ही है। पर्यावरण हमारे क्रिया कलापों से भी कुछ न कुछ प्रभावित होता ही है। परन्तु उसका उत्तर अपने क्रिया कलापों को बन्द करने या समाप्त करने में नहीं है वरन् अपनी प्रत्येक गतिविधि को पूर्णतया वैज्ञानिक अध्ययन द्वारा प्राप्त निष्कर्षों के आधार पर इस प्रकार नियन्त्रित करने में है कि विकास कार्य भी हों और पर्यावरण संरक्षण भी। केवल पर्यावरण, पर्यावरण का शोर मचा कर विकास के रथ को रोकने से क्या लाभ?

एसोसिएट प्रो० (से. नि.)
भूविज्ञान विभाग,
डी.बी.एस. महाविद्यालय, देहरादून
उपाध्यक्ष, भारतीय विज्ञान लेखक संघ,
उत्तराखण्ड प्रभाग

विज्ञान वर्ग पहेली - 7

	1		2		3		4	
5								
								6
7	8				9		10	
11			12		13			
	14		15				16	
17								

ऊपर से नीचे

1. वृत्त की परिधि का कोई भाग (2)
2. पाँचों उँगलियों में सबसे छोटी (4)
3. जिसकी सतह सपाट हों (4)
4. छोटा पत्ता (2)
6. छाती (2)
8. फ्रेड – : ब्रिटिश खगोलशास्त्री जिन्होंने ब्रम्हांड की उत्पत्ति के बारे में 'स्टेडी स्टेट' का विकास किया (3)
10. दाड़िम, एक स्वादिष्ट फल (3)
11. एक चिकना कोमल पदार्थ जो थोड़ी गर्मी से पिघल जाता है (2)
12. गर्मी अथवा ठंडक का मात्रक (4)
13. पुच्छलतारा (4)
14. वैज्ञानिक जिन्होंने प्रकाश के तरंग सिद्वान्त की व्याख्या की (2)
16. जिसका तल हर जगह समान हो (2)

संकेत बांये से दायें

3. जांच करके सिद्ध करना कि यह ठीक है (4)
5. एक सुदूर ग्रह के नाम पर आधारित रासायनिक तत्व (5)
7. आकाश में दूर तक कोहरे की तरह फैला हुआ प्रकाशपुंज (4)
9. दीर्घ वृत्त का छोटा व्यास (4)
11. यह किसी घुलनशील पदार्थ के गाढ़ेपन को दर्शाता है (4)
13. भूरे रंग से भरे होने का भाव (4)
15. प्रथम अमेरिकी वैज्ञानिक जिन्हें नोबेल पुरस्कार से सम्मानित किया गया (6)
17. दो पिंडों का गलकर एक होना (4)

बुद्धि खाद्य

○				
	○			
		○		
			○	
				○

पाँच रासायनिक तत्वों के नाम नीचे दिये गये हैं:

ईरीडियम

कोलम्बियम

कैडमियम

जर्मेनियम

पोटेसियम

इन पाँच तत्वों को झांझरी (ग्रिड) में इस प्रकार लिखियें कि गोलों के अन्दर स्थित छठां तत्व स्वयं उभर कर आ जाय।

प्रेषक
विजय खण्डूरी

(उत्तर अगले अंक में)

घमरौल

घमरौल (वर्ष 2 अंक 4 का उत्तर)

छः शब्द

उत्प्रेरण

धूमकेतु

खटमल

लेवेंडर

चंद्रबिंब

शेबफल

बैज्ञानिक का नाम
चंद्रशेखर वेंकेट रमण

PAHAL

Uttarakhand Government

FIRST
UTTARAKHAND TEACHER'S SCIENCE CONFERENCE

Focal Theme
SCIENCE EDUCATION FOR BETTER LIFE

Sub Themes

Effective class room science teaching.
Science teaching & developing scientific temper.
Curricula & Pedagogy of science education.
Science Education-traditional science and modern science.
Resource Materials and their Effective use in science Education.
Innovative science Education Programmes.

Venue
RAJEEV GANDHI NAVODAYA VIDYALYA
Tapovan Road, Raipur, Dehradun

Date
14-15 January 2013

Last date of project submission
31-12-2012

Organized by:
Uttarakhand Council of Science & Technology (UCOST)

In Collaboration with
People's Association of Hill Area Launchers (PAHAL)
&
Department of School Education, Uttarakhand

Contact Person
Smt. Kamala Pant, President, PAHAL
Mrityunjay Dham, 18 Shastri Nagar, Haridwar Road, Dehradun - 248001
Phone: 0135-2669236, M 9412047994, E-mail: kamala_pahal@yahoo.co.in